अंतस्

वार्षिक पत्रिका

वर्ष - 2012; अंक - 1

विद्यार्थी क्रियाकलाप केन्द्र

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर

कार्यालयीन उपयोगी टिप्पणियाँ

मामले का संक्षिप्त सारांश नीचे रखा है -	A brief summary of the case is placed below
स्वीकृति की प्रतीक्षा है -	Acceptance is awaited
सद्भाव से कार्य करते हुए -	Acting in good faith
इस मामले में कार्रवाई की जा चुकी है -	Action has already been taken in this matter
अनुमति लेकर अंदर आएं -	Admission with permission
कार्यसूची साथ भेजी जा रही है -	Agenda is sent herewith
प्रवर्तन करना -	Bring into commission
जवाब तलब किया जाए -	Call for an explanation
समेकित रिपोर्ट प्रस्तुत की जाए -	Consolidated report may be furnished
पद पर बने रहना -	Continue in the Office
विसंगति का समाधान कर लिया जाए -	Discrepancy may be reconciled
विवेकाधिकार -	Discretionary power
उत्तर का मसौदा अनुमोदन के लिए प्रस्तुत है -	Draft reply is put up for approval
एकपक्षीय निर्णय -	Ex-parte judgement
अनुकूल कार्रवाई के लिए -	For favourable action
अग्रेषित और संस्तुत -	Forwarded and recommended
पद पर लियन होना -	Hold lien on post
मुझे निदेश हुआ है कि मैं आपको सूचित करूँ -	I have been directed to inform you
एक मुश्त/ एक बार में -	In one lump sum
प्रथम दृष्टया -	Prima facie
आज ही जारी करें -	Issue today

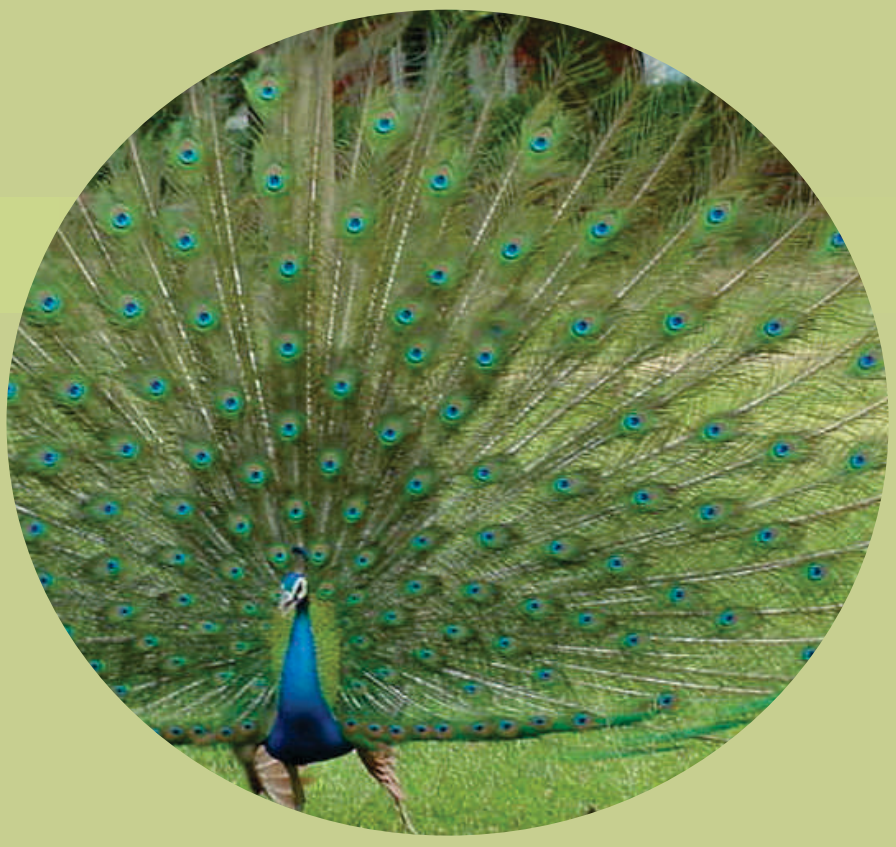

रसानुभूति
(वीररस)

निकसत म्यान तें मयूखैं प्रलैभानु जैसी, फारैं तमतोम से गयंदन के जाल को।
लागति लपक कंठ बैरिन के नागिन सी, रूद्रहि रिझावैं दै दै मुंडन की माल को।।
लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली, कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल को।
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि-काटि, कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल को।।

महाकवि 'भूषण' (छत्रसाल दशक से)

संपर्कः
राजभाषा प्रकोष्ठ
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर-208016 (उ.प्र.)
दूरभाषः 0512-2597122/2597249
ई-मेलः vedps@iitk.ac.in

डॉ. पुरुषोत्तम काशीनाथ केलकर

संस्थापक निदेशक
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर
14 दिसम्बर, 1959 - 11 अप्रैल, 1970

अंतस् परिवार

संरक्षक

प्रोफेसर संजय गो. धांडे

निदेशक

परामर्शदाता

प्रोफेसर सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव

उपनिदेशक

एवं

श्री संजीव एस. कशालकर

कुलसचिव

संपादक

प्रोफेसर अरुण कुमार शर्मा

सह-संपादक

डॉ. वेदप्रकाश सिंह

संपादन-सहयोग

प्रोफेसर सर्वेश चन्द्रा

प्रोफेसर नरेन्द्र कुमार शर्मा

प्रोफेसर हरीश चन्द्र वर्मा

प्रोफेसर समीर खांडेकर

डॉ. ओम प्रकाश मिश्र

संकलन एवं वर्तनी-शोधन

सर्वश्री जगदीश प्रसाद, भारत देशमुख, सोमनाथ डनायक

एवं

हिन्दी साहित्य-सभा (छात्र-परिषद)

अभिकल्प

श्रीमती सुनीता सिंह

छाया चित्र

श्री रवि शुक्ल

महामहिम राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवी सिंह पाटिल भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के 50 साल के इतिहास (टाइम कैप्सूल) को भूमि में समाहित करते हुए।

निदेशक की कलम से...

किसी भी व्यक्ति के लिए यह अत्यन्त महत्व रखता है कि वह किस प्रकार से शिक्षित हो रहा है, किस ढंग से चिंतन-मनन करता है । वस्तुतः शिक्षा का मतलब कुछ परीक्षायें पास कर लेना भर नहीं है बल्कि शिक्षा से प्रभावित, संस्कारित एवं प्रशिक्षित होकर प्रज्ञापूर्वक निर्भयता से जीवन जीते हुए अपनी सृजनशीलता से समाज को अभिप्रेरित करना है । इन समस्त उपक्रमों में एक व्यापक सम्पर्क भाषा के योगदान की अपेक्षा होती है एवं सम्पर्क भाषा के रूप में राजभाषा हिन्दी के व्यापक फलक से हम सभी भिज्ञ हैं ।

निदेशक के रूप में मेरे लिए यह एक सुखद अनुभूति है कि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर राजभाषा हिन्दी में अपनी वार्षिक पत्रिका **'अंतस्'** के प्रथम अंक का प्रकाशन करने जा रहा है ।

सूचना प्रौद्योगिकी एवं उपभोक्तावाद के इस वर्तमान दौर में राजभाषा हिन्दी के समक्ष स्वयं को अनुकूलित करने की एक बड़ी चुनौती है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के वैज्ञानिकों ने इस चुनौती को सहर्ष स्वीकार करते हुए भारत सरकार के **'भारतीय भाषाओं के लिए प्रौद्योगिकी विकास'** कार्यक्रम के अन्तर्गत सराहनीय शोध करते हुए बहुभाषीय **'जिस्ट प्रौद्योगिकी'** के जनक के रूप में अनेक सॉफ्टवेयरों के विकास में अपना योगदान दिया है, जिसमें मशीन आधारित अनुवाद प्रणाली **'आंग्ल-हिन्दी'** भी शामिल है।

मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि संस्थान के संकाय सदस्य,विद्यार्थी एवं कर्मचारी गण, बतौर रचनाकार, इस पत्रिका के माध्यम से पाठकों से रूबरू होंगे और राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अपनी अहम् भूमिका निभायेंगे ।

अंत में **'अंतस्'** के प्रथम अंक के समस्त रचनाकारों, संपादक मण्डल के सदस्यों एवं सहयोगियों को साधुवाद और पत्रिका के सफल प्रकाशन की शुभकामनायें ।

संजय गो. धांडे

उपनिदेशक की दृष्टि में...

लेखन के माध्यम से स्वयं को अभिव्यक्त करना पुलकित करता है। यदि वही लेखन और लोगों तक उसी मनोभाव के साथ संप्रेषित होता है तो रचनाधर्मिता के निर्वहन का आनन्द बढ़ जाता है।

मुझे इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर अपनी वार्षिक हिन्दी पत्रिका **'अंत्स'** के प्रथम अंक का प्रकाशन करने जा रहा है । यद्यपि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर एक तकनीकी शिक्षण संस्थान है तथापि यहाँ के संकाय सदस्यों/विद्यार्थियों एवं कर्मचारियों द्वारा रचित रचनायें संस्थान के बहुआयामी परिवेश तथा राजभाषा हिन्दी के प्रति लोगों के उत्कट प्रेम को दर्शाती हैं ।

मुझे विश्वास है कि **'अंत्स'** पत्रिका पाठकों को रूचिकर लगेगी, संस्थान में राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अभिवृद्धि होगी तथा लोगों को अपनी बात पाठकों तक पहुँचाने में पत्रिका एक सशक्त माध्यम बनेगी ।

मैं बड़ी सदाशयता से उन सभी लोगों को अपनी शुभकामनायें देता हूँ जिनके सतत् प्रयास से पत्रिका का प्रकाशन संभव हुआ है ।

सुरेश श्रीवास्तव

सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव

कुलसचिव के उद्‌गार...

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर की वार्षिक हिन्दी पत्रिका **'अंतस्'** के प्रथम अंक का प्रकाशन हमारे लिए गौरव का विषय है। हिन्दी भाषा राष्ट्रीय चिंतन की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। मैं आशा करता हूँ कि इस पत्रिका के माध्यम से संस्थान में उभरते हुए रचनाकारों को उचित मंच मिलेगा तथा साथ ही राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार को यथोचित गति मिलेगी। राजभाषा एवं सम्पर्कभाषा के रूप में हिन्दी भाषा का प्रयोग केन्द्र तथा सभी हिन्दी-भाषी राज्यों में प्रशासनिक स्तर पर बड़ी विपुलता से किया जा रहा है। राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के प्रयोग की दिशा में संस्थान ने सदैव उल्लेखनीय भूमिका का निर्वहन किया है।

मैं **'अंतस्'** के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ और इस उपक्रम के लिए संपादक मंडल को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

संजीव कशालकर

संजीव एस. कशालकर

सम्पादक की कलम से...

अंतस् का प्रथम अंक आप के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष है। यह अंक राजभाषा प्रकोष्ठ, हिन्दी में रुचि रखने वाले संकाय सदस्यों, कर्मचारीगण तथा विद्यार्थियों के सम्मिलित प्रयास का प्रतिफल है जो माननीय निदेशक महोदय से प्राप्त प्रोत्साहन द्वारा ही सम्भव हो सका है।

संपादन मंडल की गोष्ठी में जब इस पत्रिका का नामकरण हुआ तो उसके पीछे एक भावना थी कि यह पत्रिका अपनी मातृभाषा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के विशाल परिवार, जिसमें भूतपूर्व छात्र भी सम्मिलित हैं, के अनेकानेक स्वप्नों को अभिव्यक्त करेगी। इन स्वप्नों के समवेत प्रभाव से एक ऐसे नवीन स्वप्न का निर्माण होगा जो भारतीय समाज की दिशा और दशा को प्रभावित करेगा, ऐसी आशा है। कहना न होगा कि भारत के तकनीकी संस्थानों में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर का विशेष स्थान है। यह संस्थान राजभाषा के माध्यम से ज्ञान और रचनात्मकता की गंगा को इस देश की धरती पर उतारने के भागीरथ कार्य के लिए समर्पित है। कुछ वर्षों पूर्व एक स्वतंत्रता दिवस समारोह में बोलते हुए, हमारे प्रिय निदेशक डॉ संजय गो. धांडे, ने मानव सभ्यता के तीन प्रमुख आयाम बताए थे-अणु, अक्षर, ओउम्, अर्थात् तकनीकी ज्ञान, शिक्षा का प्रसार और आध्यात्मिकता। आशा है कि **अंतस्** इन सभी दिशाओं में चेतना को प्रभावित और प्रेरित करेगी।

एड्ड लम्बे समय से इस बात की आवश्यकता महसूस की जा रही थी कि संस्थान में एक नियमित हिन्दी पत्रिका प्रकाशित हो। समय समय पर यों कई अनौपचारिक पत्र-पत्रिकाएं अवश्य प्रकाशित हुईं और बंद हो गईं किन्तु संस्थान की ओर से त्रैमासिक पत्रिका 'सजग' के आने के बाद ही यह रिक्तता आंशिक रूप से भरी गई। तथापि अपने सीमित आकार और तथ्य-केन्द्रितता के कारण उसकी एक सीमा है। अतः अब यह निश्चित किया गया है कि वर्ष में एक बार वार्षिक पत्रिका **अंतस्** का प्रकाशन किया जायेगा। 'सजग' से विपरीत **अंतस्** मूल रूप से भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर परिसर के संघर्षों, अनुभवों और स्वप्नों को रचनात्मक लेखन के माध्यम से आप तक लाने का एक प्रयास है जिसमें आपकी भागीदारी की प्रबल अपेक्षा है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर भविष्योन्मुखी है, इसके पास आशाएं हैं, स्वप्न हैं और मनुष्यता के उद्विकास की सशक्त नवीन अवधारणाएं हैं। हमारा ये परिवार तकनीकी शिक्षा के उदेश्य मात्र से ही संतुष्ट नहीं है। यह सामाजिकता, अर्थशास्त्र, अध्यात्म, ललितकला, समानता और मानव एकता के लिए भी उतना ही प्रयत्नशील है जितना तकनीकी शिक्षा के लिए। संक्षेप में कहें तो यह संस्थान जीवन की समस्त विधाओं, सामंजस्य, शान्ति और समृद्धि के लिए प्रतिबद्ध है। आपके दैनिक जीवन के अनुभव और **अंतस्** में संकलित रचनाएं इसके साक्षी हैं। हर्ष के इस समय में मैं प्रशासन, संपादन मंडल और विशेष रूप से राजभाषा प्रकोष्ठ का आभार व्यक्त करता हूँ जिनके प्रयास और सहयोग से इस पत्रिका का प्रकाशन सम्भव हो पाया है।

आपके द्वारा इसका अवलोकन हो, मूल्यांकन हो, और आपकी भागीदारी से इसका सतत् विकास हो ऐसी मेरी कामना है। इसी शुभेच्छा के साथ,

शुभकामनाओं सहित.....

अरुण कुमार शर्मा

अरुण कुमार शर्मा

सुखानुभूति ज्ञापन...

यह सुखद अनुभूति है कि हिन्दी-भाषा में नित नए-नए समाचार पत्रों एवं पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है। स्थापित पत्र-पत्रिकाएँ विविध आयामों के साथ पाठकों से रूबरू हो रही हैं। वस्तुतः हिन्दी भाषा बदलते वैश्विक परिवेश में नई-नई तकनीकी पहलुओं को आत्मसात करते हुए अपनी उपबोलियों एवं जनमानस में बहुप्रयुक्त अन्य भाषा के शब्दों के उभार को पचाते हुए शिक्षा एवं विज्ञान के हर क्षेत्र में अपनी अभिव्यक्ति कौशल की प्रामाणिकता सिद्ध कर रही है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर राष्ट्रीय महत्व का एक संस्थान है और देश के उस भाग में स्थित है जिसे हिन्दी भाषा के प्रयोग की दृष्टि से, बक़ौल संघ सरकार, **'क'** क्षेत्र कहा जाता है; इस क्षेत्र में निवास अथवा कार्य-व्यापार करने वाले प्रत्येक शिक्षित नागरिक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह विचार-विमर्श के अपने हर माध्यम में हिन्दी भाषा का प्रयोग प्रचुरता से करेगा। संस्थान -राजभाषा प्रकोष्ठ ने संघ द्वारा स्वीकृत, प्रामाणित एवं स्थापित राजभाषा हिन्दी के प्रयोग, प्रचार-प्रसार के उत्तरदायित्व को वर्षों से निभाते हुए परिसर में रचनात्मक हिन्दी-साहित्य में लेखन और अनुशीलन की गतिशीलता को बनाए रखने के उद्देश्य से वार्षिक हिन्दी -पत्रिका **'अंतस्'** के प्रकाशन का उद्यम किया है जिसका प्रथम अंक आपके हाथ में है।

ज़ाहिर है कि कई दिनों के विचार-विमर्श, अनेक लोगों के सहयोग, समर्थन विशेष रूप से निदेशक, उपनिदेशक, कुलसचिव की सतत् प्रेरणा से पत्रिका का प्रकाशन फलीभूत हुआ है। मैं अपनी तथा राजभाषा प्रकोष्ठ की ओर से इन सभी के प्रति बड़ी सदाशयता से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

पत्रिका हेतु अलग-अलग विधाओं की रचनाओं, लेखों के संकलन, उनका सुरूचिपूर्ण संयोजन, सम्पादन, वर्तनी-शोधन आदि का कार्य चुनौतीपूर्ण परंतु दिलचस्प रहा है। साहित्य-सभा (छात्र-परिषद) के सदस्य मनीष, आशीष, सुमन, अंकुर, अवनीत, अमन, नम्रता, किरण एवं प्रांजल ने राजभाषा प्रकोष्ठ के श्री जगदीश प्रसाद तथा श्री भारत देशमुख के साथ मिलकर कृतियों के संकलन एवं चयन में हिन्दी-भाषा के प्रति जिस सेवाभाव का परिचय दिया है उसके लिए इन सभी की जितनी प्रशंसा की जाए वह कम है। श्रीमती सुनीता सिंह ने अपने अभिकल्प-कौशल से पत्रिका को गरिमामयी आकर्षक रूप देकर अपनी नारी-सुलभ सौन्दर्य-चेतना को मूर्तरूप प्रदान किया है उसके लिए उन्हें मुबारकबाद देना ही उनके प्रति उचित सम्मान होगा। मुख्य संपादक प्रो. अरुण कुमार शर्मा ने अपने अति व्यस्त कार्यक्रम से जिस तरह से समय निकालकर धैर्यपूर्वक हमारा नेतृत्व करते हुए संपादन एवं वर्तनी-शोधन के कार्य को अत्यंत अल्प समय में पूर्ण किया है उसके लिए उन्हें धन्यवाद की परिधि में लाना मात्र फर्ज़अदायगी ही होगी। आभार व्यक्त करता हूँ पूर्व उपनिदेशक प्रोफेसर राजकुमार थरेजा एवं संपादन मंडल के सदस्य प्रो.सर्वेश चन्द्रा, प्रो. नरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रो. हरीश चन्द्र वर्मा, प्रो. समीर खांडेकर, डॉ ओमप्रकाश मिश्र तथा श्री सोमनाथ डनायक जी का; समय-समय पर जिनके उचित मार्गदर्शन को विस्मृत नहीं किया जा सकता है। छायाचित्रों के संकलन के लिए श्री रवि शुक्ला धन्यवाद के पात्र हैं।

अंततःसंस्थान के सभी सदस्यों को पत्रिका-प्रकाशन में उनकी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहभागिता के लिए, हार्दिक बधाई देते हुए इस अभिलाषा के साथ कि 'अंतस्' पत्रिका हरदिलअज़ीज़ बनेगी, मैं इसे पाठकों को सौंपता हूँ; निवेदन करता हूँ कि सुधी पाठक अपने सुझावों से हमें अवश्य अवगत करें।

डॉ वेदप्रकाश सिंह
सम्पर्क अधिकारी (हिन्दी)
एवं
सह संपादक

सादर अनुरोध

1. 'अंतस्' के आगामी अंक में प्रकाशन हेतु अपनी रचनायें शीघ्रातिशीघ्र भेजने का कष्ट करें।

2. रचनायें यथासंभव टाइप की हुई हों, रचनाकार का पूरा नाम, पद एवं पता का उल्लेख अपेक्षित है।

3. रचना की विषय-वस्तु प्रौद्योगिकी, विज्ञान अथवा मानविकी विषयों पर आधारित होना चाहिए।

4. आवश्यकतानुसार लेखों में शामिल छाया-चित्र, आंकड़ों से सम्बधित आरेख स्पष्ट होने चाहिए।

5. प्रयुक्त भाषा सरल, स्पष्ट एवं सुवाच्य हिन्दी भाषा हो।

6. अनूदित लेखों की प्रामाणिकता अवश्य सुनिश्चित करें। अनुवाद में सहायता हेतु संस्थान राजभाषा प्रकोष्ठ से संपर्क करें।

7. लेख मौलिक एवं यथासंभव अप्रकाशित होने चाहिए।

स-आभार
संपादन मंडल

नोट-पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, तार्किकता एवं सत्यता हेतु लेखकगण उत्तरदायी है।

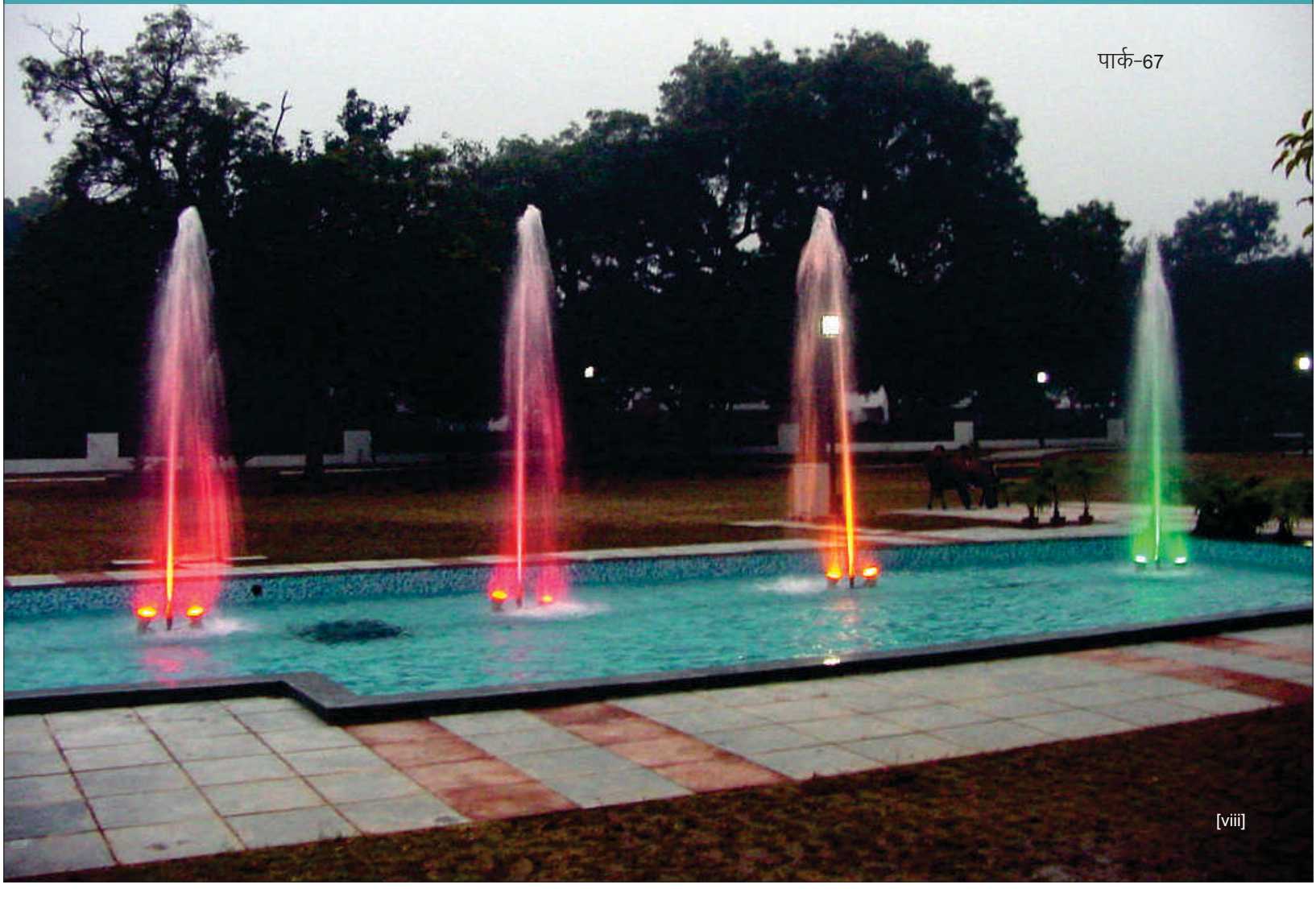

पार्क-67

संकेतक

साक्षात्कार 01
प्रेरक व्यक्तित्व-डॉ.पुरुषोत्तम काशीनाथ केलकर 02
विविधताओं से पूर्ण भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर 04
मैं साहित्य क्यों पढ़ता हूँ? 06
उन्हें नमन (कविता) 08
मेरा प्रारब्ध 08
परीक्षा (कविता) 10
शहीदों के परिवार की व्यथा (कविता) 11
स्वस्थ जीवन के सात सूत्र 11
धन की कीमत (कविता) 13
गजल 13
छायाचित्र खेल-कूद प्रतियोगिता 14
छायाचित्र हिन्दी-दिवस-समारोह 15
विगत-स्मृति 17
क्या भ्रष्टाचार ही सब समस्याओं की वजह है? 21
कुछ तेरी आँखों का जादू 22
जैंटल मैन (कविता) 24
मेरी विदेश-यात्रा 25
कविता 27
बे-लगाम 27
कोटि-कोटि प्रणाम 29
संस्कार 30
दुकान (कविता) 31
अतीत के झरोखे से 31
बचपन की दोस्ती (कविता) 33
देश की पुकार (कविता) 34
खुशी 34
गधे का दिमाग (कविता) 35
भीड़ (कविता) 35
लघु कथा 36
राष्ट्रीय एकता की कड़ी हिन्दी-भाषा 36
हमारा प्रयास 38

संस्थान की ऐतिहासिक उपलब्धि

जुगनू

साक्षात्कार

कहा जाता है कि परिश्रम के पायदान पर चढ़कर सरस्वती की साधना करने वाले को अक्षय यश की प्राप्ति होती है। ऐसे ही कर्तव्यपरायण एवं जीवंत व्यक्तित्व के धनी है प्रोफेसर संजय गो. धांडे। विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विषयों के गहन अध्येता, मानवीय रिश्तों की सूक्ष्मातिसूक्ष्म परख में दक्ष प्रोफेसर धांडे ने भा.प्रौ.सं. कानपुर से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त इसी संस्थान में यांत्रिक अभियांत्रिकी एवं संगणक विज्ञान विभाग में अध्यापन के साथ-साथ अनुसंधान एवं विकास कार्यालय के अधिष्ठाता पद को सुशोभित किया। आपने प्रधानमंत्री के वैज्ञानिक सलाहकार परिषद के सदस्य के रूप में एवं पंडित द्वारिका प्रसाद मिश्र भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी, अभिकल्प एवं विनिर्माण संस्थान, जबलपुर के संस्थापक निदेशक जैसे अनेक उल्लेखनीय उत्तरदायित्वों का सफलतापूर्वक निर्वहन किया है।

सम्प्रति, संस्थान के निदेशक के रूप में आप विद्यार्थियों, प्राध्यापकों एवं कर्मचारियों के प्रेरणा-स्रोत रहे हैं। आपके अद्‌भुत नेतृत्व में संस्थान ने शिक्षा एवं शोध के क्षेत्र में नई-नई बुलन्दियों को हासिल किया है जिसे पूरे देश ने स्वीकार किया है।

हिन्दी साहित्य-सभा (छात्र-परिषद) के सदस्यों के साथ अपने साक्षात्कार में प्रो.धांडे ने युवाछात्रों की मनोदशा, बदलते परिवेश में बदलती भूमिकाएं, आदर्श एवं राष्ट्रभाषा आदि विषयों पर बड़ी साफगोई से अपने विचारों को रखा है। आशा है सुधी पाठक इससे प्रेरित एवं लाभान्वित होंगे। इसी प्रत्याशा में प्रस्तुत है साक्षात्कार के प्रमुख अंश...

सर! इतनी बड़ी जिम्मेदारी संभालते हुए भी शायद ही हमनें कभी आपको तनावग्रस्त देखा होगा, आप किस प्रकार यह सामंजस्य बिठाते हैं?

तनाव मानसिक स्थिति का प्रतिबिम्ब है, संस्था चलाने की जो जिम्मेदारी है उसके लिए आपमें वैचारिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक समन्वय जरूरी होता है। सामाजिक नेतृत्व के लिए हमें अच्छी तालीम नहीं मिल रही है। मेरे विषय में कहा जाए तो मैं समझता हूँ कि मेरे व्यक्तित्व के दो पहलू हैं- एक तो पहले से ही स्वभाव से मैं विनोद या हास्य को बहुत महत्व देता हूँ। मन को स्वस्थ रखने के लिए मैं समझता हूँ शुद्ध विनोद (जिससे किसी को ठेस न पहुँचे) का सहारा लेना चाहिए। मैं समझता हूँ कि मेरे स्वभाव में ये एक बिन्दु छुपा हुआ है जिससे मैं तनाव से उबर जाता हूँ। दूसरा पहलू ये है कि मैं किसी बड़ी कॉलोनी में नहीं पला हूँ। मोहल्ले में त्योहार, झगड़ा और सुख-दुख बाँटने वाली बचपन की तालीम निदेशक की जिम्मेदारी संभालने में मेरे लिए सबसे ज्यादा काम आ रही है।

सर! आपने अपने लिए बचपन में कौन से सपने संजोये थे?

बचपन से ही मेरा नाट्यक्षेत्र विशेष कर मराठी नाटकों से जुड़ाव रहा है। लेखन का भी शौक है और आगे मौका मिलने पर इन्हीं क्षेत्रों से जुड़ना चाहूँगा। मैं हिन्दी में भी लिखता हूँ, जागरण और हिन्दुस्तान में भी मेरे लेख प्रकाशित हुए हैं।

प्रोफेसर और विद्यार्थियों की अपने-अपने कार्यों में व्यस्तता अथवा अन्य कारणों से उनके मध्य अन्तः सम्बन्ध लगभग शून्य हो गए हैं, आप इसे बढ़ाने के लिए क्या सुझाव देना चाहेंगे?

इससे मैं थोड़ा असहमत हूँ क्योंकि आज भी मैं बहुत से पीएचडी विद्यार्थियों, डिजाइन प्रोग्राम और जुगनू टीम के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ हूँ। मेरे अनुसार शिक्षा-प्रणाली का तौर-तरीका इस तरह होना चाहिए कि शिक्षक और विद्यार्थियों में लगाव और प्रेम की भावना विकसित हो जैसा कि जुगनू टीम में है।

आपको अध्यापन का बहुत अधिक अनुभव है, आपके अनुसार आज विद्यार्थियों की मानसिकता में क्या परिवर्तन आया है?

विद्यार्थी तो कच्ची मिट्टी होता है बस निर्भर करता है कि उसको बनाने वाला कुम्हार और औजार कैसे हैं? मिट्टी में कोई बदलाव नहीं आया है। आज की चमक-दमक की दुनिया में मन की एकाग्रता और सृजनशीलता रखते हुए स्वस्थ मनोरंजन के साथ आनन्द का संतुलन कैसे रखा जाए यही विद्यार्थियों को सिखाना सबसे बड़ी शिक्षा है। कठिन सवालों से दिमाग तो तेज होता है परन्तु मन को सिखाना पहले आवश्यक है लेकिन यह कठिन भी है।

सर! कोई आदर्श व्यक्ति या घटना जिससे आपको अपने जीवन में प्रेरणा मिली हो?

सर्वप्रथम तो मेरे माताजी और पिताजी, उनका त्याग हम कभी नहीं भूलेंगे। इसके अलावा कुछ विद्यालय और कॉलेज के शिक्षक भी मेरे आदर्श हैं। मेरे साथ अमेरिका में काम करने वाले प्रोफेसर जॉर्ज सैन्डो के व्यवहार और आदत मेरे लिए सदैव आदर्श हैं। इसके अलावा मैंने अपनी पत्नी, बच्चों और अन्य सदस्यों से भी बहुत कुछ सीखा है।

सर! शैक्षणिक गतिविधियों और अध्ययन में सामंजस्य न बिठा पाने के कारण विद्यार्थी तनावग्रस्त न हों, इसके लिए आप उन्हें क्या संदेश देना चाहेंगे?

मैं समझता हूँ कि पहले जिन्दगी को सीख लो। करियर और जिन्दगी में फर्क है। जिन्दगी अच्छी होने के लिए जो सीखना है वह सीखें।

सर! कैंपस में राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार और इसकी महत्ता के बारे में आप कुछ कहना चाहेंगे?

हिन्दी का प्रचार-प्रसार होना चाहिए क्योंकि जब तक आपकी मातृभाषा सुदृढ़ नहीं होगी, संस्कृति और समाज सुदृढ़ नहीं होगा। आज भी नीरज जैसे कवियों की कविताएं आनंदित करती हैं परन्तु हास्य के नाम पर छिछोरापन नहीं होना चाहिए।

साक्षात्कारकर्ता -
भुवन गुप्ता,
अमन जैन (छात्र)

सद्विचार

भारत अपने मूल स्वरूप में कर्मभूमि है, भोग भूमि नहीं।

मेरे लिए देश-प्रेम और मानव-प्रेम में कोई भेद नहीं है, दोनों एक ही हैं। मैं देशप्रेमी हूँ, क्योंकि मैं मानव-प्रेमी हूँ।

न कोई नीच और न कोई ऊँचा। किसी आदमी के शरीर में सिर इसलिए ऊँचा नहीं है कि व सबसे ऊपर है और पाँव के तलुवे इसलिए नीचे नहीं हैं कि वे ज़मीन को छूते हैं। जिस तरह मनुष्य के शरीर के सारे अंग बराबर हैं, उसी तरह समाजरूपी शरीर के सारे अंग भी बराबर हैं। यही समाजवाद है।

लक्ष्य की सिद्धि ठीक उतनी ही शुद्ध होती है, जितने हमारे साधन शुद्ध होते हैं। यह बात ऐसी है जिसमें किसी अपवाद की गुंजाइश नहीं है।

महात्मा गाँधी

प्रेरक व्यक्तित्व: डॉ पुरुषोत्तम काशीनाथ केलकर

वर्तमान में जब हम भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के गौरवशाली अतीत का अध्ययन करते हैं, तो पाते हैं कि संस्थान की स्थापना के लिए आवश्यक अधोसंरचना के अभाव के बावजूद संस्थान रूपी इस बीज का एक वट वृक्ष के रूप में पनपना, अपने आप में एक उल्लेखनीय घटना क्रम है। इस कड़ी में, हमारे लिए उस विभूति का स्मरण करना आवश्यक हो जाता है जिसने अपनी इच्छा-शक्ति एवं अदम्य साहस के बल पर भा. प्रौ. सं. कानपुर रूपी बीज के पोषण का काम किया था, वह विभूति हैं डॉ पुरुषोत्तम काशीनाथ केलकर जिन्हें 1959 में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर का प्रथम निदेशक बनने का गौरव प्राप्त हुआ था। कहते हैं समय के साथ हर चीज धुंधली पड़ जाती है किन्तु संस्थान के लिए डॉ. केलकर के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। यद्यपि डॉ. केलकर आज हमारे बीच नहीं हैं तथापि लेखनी के माध्यम से ही सही उन्हें याद करना उनके प्रति सच्चा सम्मान होगा।

डॉ. केलकर का जन्म 1 जून 1909 को कर्नाटक के धारवाड़ जिले में हुआ था। स्कूली शिक्षा प्राप्त करने के बाद डॉ. केलकर ने बंबई के रॉयल इंस्टीट्यूट ऑफ साइन्स से भौतिकी विषय में स्नातक की उपाधि प्राप्त की । इसके बाद उन्होंने प्रतिष्ठित भारतीय विज्ञान संस्थान बैंगलोर से विद्युत अभियांत्रिकी में डिप्लोमा प्राप्त किया तथा 1937 में यूनिवर्सिटी ऑफ लीवरपूल से इसी विषय में पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

सन् 1959 में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर की स्थापना के समय से ही निदेशक के रूप में डॉ. केलकर को संस्थान से संबंधित विभिन्न समस्याओं से जूझना पड़ा लेकिन वे अपने मिशन को लेकर काफी आशान्वित थे। संस्थान के सकारात्मक कार्यों की दिशा में पहला कार्य प्रथम बैच के छात्रों द्वारा संस्थान में प्रवेश लेना था, इस अवसर पर संस्थान के प्रथम निदेशक की हैसियत से डॉ. केलकर ने छात्रों का बड़े उत्साह एवं आत्मीयता से स्वागत किया जो इस बात का द्योतक है कि वे छात्रों में ही संस्थान एवं समाज का भविष्य देखते थे। आरंभिक दिनों में डॉ. केलकर यह जानते थे कि यदि संस्थान को विश्व स्तरीय बनाना है तो शैक्षणिक एवं अधोसंरचनात्मक विकास के साथ-साथ अन्य पहलुओं पर भी ध्यान देना होगा। संस्थान के नयनाभिराम परिसर को देखकर

हम डॉ केलकर की चहुँमुखी सोच का पता लगा सकते हैं। डॉ केलकर का सोचना था कि तकनीकी शिक्षा में नवीन एवं चुनौतीपूर्ण संकल्पनाओं का समायोजन किया जाए ताकि हम ऐसे इंजीनियर तैयार कर सकें जो किसी भी परिस्थिति का मुकाबला करने में सक्षम हों। वे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों के मेधावी छात्रों को इसी रूप में देखना चाहते थे और इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर उन्होंने जो ज्योति भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर में जलायी थी, वह आज पूरे विश्व में प्रकाशमान हो रही है। डॉ केलकर ने यह स्वीकार किया था कि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर की स्थापना भारत देश के संदर्भ में एक महती आवश्यकता है, जो देश के अन्य तकनीकी संस्थानों का दीर्घकाल तक मार्गदर्शन करता रहेगा।

डॉ. केलकर ने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर को एक उत्कृष्ट शैक्षणिक संस्थान बनाने के लिए कई कदम उठाए और इस दिशा में उन्होंने सामूहिक रूप से कई लक्ष्य तय किये। मेधावी छात्रों का सर्वांगीण विकास करना, उनकी पहली प्राथमिकता थी। वे चाहते थे कि छात्र भी संस्थान के विकास में कंधे से कंधा मिलाकर काम करें ताकि शैक्षणिक उत्कृष्टता के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। डॉ केलकर की सोच का ही परिणाम था कि 1960 के दशक के मध्य विद्यार्थियों को सभी सीनेट कमेटियों में प्रतिनिधित्व दिया जाने लगा। संस्थान के सबसे महत्वपूर्ण अंग के रूप में संकाय सदस्यों द्वारा चुनौतीपूर्ण पाठ्यक्रम को विकसित करने तथा उसे प्रभावी ढंग से अमल में लाने के लिए उन्हें उत्साहित करने की आवश्यकता थी, जिसे डॉ. केलकर ने पूरा किया था। वे अपने युवा एवं उत्साही संकाय सदस्यों को व्यक्तिगत रूप से शिक्षण कार्य में अधिक से अधिक परिश्रम करने के लिए प्रोत्साहित करते थे। निदेशक के रूप में डॉ. केलकर की प्रशासनिक क्षमता का पता इसी बात से चलता है कि वे शैक्षणिक कार्यों से संबंधित सभी मामलों में सभी की राय को महत्व देते थे। डॉ. केलकर सरल हृदय के व्यक्ति थे तथा आपसी विचार-विमर्श के द्वारा किसी भी समस्या का समाधान ढूंढने का प्रयास करते थे। उनकी कार्यशैली की एक खास बात थी कि वे अपने साथी संकाय सदस्यों तथा अधीनस्थ कर्मचारियों को आदेश देने के बजाए उनसे निवेदन करते थे।

डॉ. केलकर के शब्दों में, "कोई भी शैक्षणिक संस्थान प्राथमिक रूप से ज्ञान से संबंधित होता है और इस दृष्टि से वहाँ तीन विशिष्ट कार्य संपन्न कराये जाते हैं-ज्ञान का सृजन, ज्ञान का प्रसार तथा ज्ञान का प्रयोग।" उन्होंने किसी भी तकनीकी संस्थान की कार्यसाधकता के मूल्यांकन के लिए उक्त मानकों को स्वीकार किया था। डॉ. केलकर ने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के संदर्भ में अपनी संकल्पना को मूर्तरूप देने की कोशिश की थी। आज भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर अपनी स्थापना के 50 वर्ष पूरे कर चुका है और संस्थान ने इन पचास वर्षों में तकनीकी शिक्षा एवं अनुसंधान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण काम किये हैं तथा संस्थान के शिक्षकों ने ऐसे छात्र तैयार किये हैं जिन्होंने राष्ट्रनिर्माण की प्रक्रिया में अपना सहयोग दिया है अथवा दे रहे हैं। हम इसे डॉ. केलकर की सोच का नतीजा ही मान सकते हैं।

डॉ केलकर की योग्यता एवं प्रतिबद्धता के लिए उन्हें देश-विदेश के संगठनों ने सम्मानित किया था। 1970 में भारत सरकार ने उन्हें पद्म भूषण से सम्मानित किया था और इसी तारतम्य में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर ने उन्हें 1981 में दीक्षान्त समारोह के दौरान डॉक्टर ऑफ साइंस की मानद उपाधि प्रदान की थी। संस्थान में स्थित भव्य पुस्तकालय का नाम उनके नाम पर रखा गया है। संस्थान ने 1 जून 2009 को अपने संस्थापक निदेशक डॉ पी के केलकर का 100वाँ जन्मदिन मनाते हुए उनके सम्मान में वर्ष 2009 को जन्म शताब्दी वर्ष घोषित किया था। डॉ केलकर ने 1981 के दीक्षान्त समारोह के दौरान अपने अन्तर्मन की बात प्रकट करते हुए कहा था कि 'उनके द्वारा भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर में बिताए गए दस साल उनके जीवन के सबसे महत्वपूर्ण पल थे क्योंकि उन्हें पारम्परिक शिक्षा-पद्धति के स्थान पर तकनीकी शिक्षा के लिए विश्व स्तरीय मंच तैयार करना था नि:संदेह डॉ केलकर अपनी नीतियों एवं अथक परिश्रम से अपने लक्ष्य को साकार करने का प्रयास किया जिसके लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर से जुड़ा हर व्यक्ति उनके प्रति सम्मान एवं आभार प्रकट करता है।

भारत भूषण देशमुख
कनि. तक. अधीक्षक (अनुवाद)
राजभाषा प्रकोष्ठ

रहे मेरे भवन में रौशनी हिंदी-चिरागों की,
कि जिसकी लौ पे जलकर खाक हो विस्मिल सा परवाना।
शहीद राम प्रसाद 'विसमिल'

विविधताओं से पूर्ण भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर

विविधताओं से पूर्ण भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर एक विश्व स्तरीय तकनीकी संस्थान है जहाँ पर संकाय एवं विद्यार्थी हमेशा अध्ययन एवं अनुसंधान कार्यों में लगे रहते हैं । उल्लेखनीय है कि अध्ययन एवं अनुसंधान कार्यों के अतिरिक्त संस्थान के संकाय सदस्य, कर्मचारी एवं विद्यार्थीगण विभिन्न प्रकार की संस्थाओं के माध्यम से समाज के पिछड़े एवं निर्धन वर्ग के उत्थान के लिए भी सदैव तत्पर रहते हैं । संस्थान एवं संस्थान के आस-पास समाज कल्याण हेतु स्वयंसेवी संस्थाओं के रूप में कार्य करने वाली ऐसी ही कुछ प्रमुख संस्थाओं का विवरण लेख में है ।

शिक्षा-सोपान

यूँ तो संसार में बहुत कष्ट हैं फिर भी यह बहुत खूबसूरत है क्योंकि इसमें संवेदनाऐं है, इसमें स्नेह है और इसमें सहयोग है । सहयोग, स्नेह एवं संवेदनाएं जब न्यून होने लगती हैं तो आर्थिक, शैक्षणिक, सामाजिक विषमताएं इस खूबसूरत संसार को बदसूरत बना देती हैं और संसाधनों से वंचित समाज के लिए जीवन-यापन भी दूभर हो जाता है ।

शिक्षा, संस्कार व स्वावलम्बन इन तीन ध्येय शब्दों के साथ समाज के सभी वर्गों के बीच सहयोग, स्नेह एवं संवेदना को बलवती बनाने हेतु शिक्षा सोपान, भा.प्रौ.सं. कानपुर, कानपुर के समीपस्थ गाँवों में विगत अनेक वर्षों से निरंतर कार्यरत है ।

इन गाँव के सैकड़ों परिवारों में शिक्षा सोपान के प्रयासों से आशा, उत्साह व चेतना का संचार हुआ है और बदलाव की यह बयार लगातार बह रही है । शिक्षा सोपान के बहुआयामी कार्यकलापों में से कुछ इस प्रकार हैं:

सोपान-विद्यालय - सोपान की यह इकाई भा.प्रौ.सं. कानपुर से जुड़े बारासिरोही गाँव में एक किराए के कमरे में स्थापित है । इसमें आस-पास के गाँवों के अत्यन्त निर्धन एवं पिछड़े बच्चों (कक्षा 1 से लेकर कक्षा 8 तक) को शिक्षा प्रदान की जाती है । शिक्षा सोपान, पढ़ाई से संबंधित बच्चों के समस्त खर्चे-जैसेः कापी-किताब, स्टेशनरी आदि निःशुल्क प्रदान करती है । यह इकाई बच्चों को लंच के रूप में चनें, दलिया, बिस्किट तथा फल आदि भी प्रदान करती है ।

सायं कालीन केन्द्र - इस केन्द्र में ऐसे बच्चों को पढ़ाने का कार्य किया जाता है, जिन्होंने किन्हीं कारणों से कहीं पर भी विद्यालय में प्रवेश नहीं ले रखा है । केन्द्र में सायं के समय बच्चों को ट्यूशन के रूप में निःशुल्क दो घंटे पढ़ाया जाता है । इस केन्द्र में बच्चों को विशेष रूप से गणित, विज्ञान एवं अंग्रेजी विषयों की शिक्षा प्रदान की जाती है। वर्तमान में इस केन्द्र की दो इकाईयाँ बारासिरोही गाँव एवं आईआईटी के पुराने सैक भवन में कार्य कर रही हैं दोनों इकाइयों में क्रमशः 40 एवं 50 बच्चे शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं ।

गहन अध्ययन केन्द्र - इस केन्द्र में कक्षा 9 से 12 तक के बच्चों को गणित, विज्ञान एवं अंग्रेजी विषय पढ़ाये जाते हैं। शिक्षक के रूप में बी.एससी. एवं एम.एससी. स्तर के स्थानीय युवकों की पारिश्रमिक के आधार पर सेवाएं ली जाती हैं ।

प्रतिभा-पोषण योजना - (1) कक्षा 5 के स्तर पर एक प्रवेश परीक्षा का आयोजन कर बच्चों का चयन किया जाता है जिसमें बच्चों की शैक्षणिक एवं आर्थिक स्थित का मूल्यांकन कर प्रवेश दिया जाता है । चयन के उपरांत बच्चों को जुगल देवी इण्टर कालेज में (कक्षा 6 से 12 तक) के अध्ययन के लिए प्रवेश दिलाया जाता है । इस दौरान शिक्षा सोपान इन बच्चों की पढ़ाई का पूरा खर्च जैसेः (यूनीफार्म, स्टेशनरी, बस खर्च, टयूशन फीस) आदि वहन करता है ।

प्रतिभा-पोषण योजना - (2) इस योजना के तहत दल के सदस्य दूरस्थ गाँव में जाकर कक्षा 9 से कक्षा 12 तक के बच्चों का साक्षात्कार लेने के उपरान्त चयन करते हैं तथा चयनित होने पर ऐसे बच्चों के लिए आई. आई. टी. के अन्दर 36 दिन का विशेष ग्रीष्म कालीन शिविर लगाया जाता है । इस शिविर के दौरान बच्चों को गणित, विज्ञान एवं अंग्रेजी विषयों का गहन अध्ययन कराया जाता है। आई. आई. टी. कानपुर इस शिविर के लिए भवन एवं बिजली मुफ्त उपलब्ध कराता है।

विज्ञान टीम - विज्ञान टीम, विज्ञान के छोटे-छोटे मॉडल बनाती है, जिनको आस-पास के विद्यालयों में प्रदर्शित किया जाता है । समय-समय पर शिक्षकों के लिए विज्ञान की प्रयोगशालाएं भी आयोजित की जाती हैं । स्कूलों को माँग के आधार पर विज्ञान की किट भी उपलब्ध कराई जाती है ।

वी एन के मेरिट छात्रवृत्ति - भौतिकविद डॉ. वी एन कुलकर्णी की याद में इस पुरस्कार का गठन किया गया है । यह पुरस्कार 3 वर्गों में वार्षिक दिया जाता है । कक्षा-वर्ग 6-8 (1000 रु.), 9-10 (1500 रु.), 11-12 (3000 रु.) क्रमशः कक्षा 5, 8 एवं 10 के उपरान्त दिया जाता है ।

उच्च शिक्षा केन्द्र - इस योजना में ऐसे बच्चों को शामिल किया जाता है जो व्यवसायिक कोर्स करना चाहते हैं परन्तु आर्थिक स्थिति कमज़ोर होने के कारण इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश नहीं ले पाते हैं । केन्द्र इन बच्चों की पूर्ण रूप से आर्थिक मदद करता है । इस योजना का लाभ उठाने के लिए निम्न मानदण्ड लागू किये गए हैं : (1) बच्चा शिक्षा सोपान से जुड़ा हुआ होना चाहिए (2) बच्चे का शैक्षणिक स्तर अच्छा होना चाहिए (3) बच्चे में आत्म विश्वास एवं लगन भी होनी चाहिए ।
सोपान का आदर्श वाक्य है:
'अंधकार को क्यों धिक्कारें - अच्छा है एक दीप जलाएं।'

जागृति बाल विकास समिति

जागृति बाल विकास समिति बच्चों की शिक्षा एवं उनके उत्थान के लिए कार्य करती है । जागृति बाल विकास समिति सामाजिक, आर्थिक एवं लिंग असमानताओं रहित समाज के निर्माण के लिये कार्य कर रही है। समिति इस सपने को साकार करने के लिये दलित एवं शोषित बच्चों को शिक्षित करने तथा उनका कल्याण करने के लिये कार्य कर रही है। इन कार्यों में प्रमुख रूप से मित्रवत वातावरण में बच्चों को शिक्षित करना शामिल है। शिक्षा के माध्यम से बच्चों को न्याय, धर्म-निरपेक्षता तथा लिंग समानता की आवश्यकता के प्रति भी जागरूक किया जाता है। आर्थिक जरुरतों को ध्यान में रखते हुए समिति ने शिक्षा पाठ्यक्रम में व्यवसायिक प्रशिक्षण एवं विपणन को भी शामिल किया है।

स्वामी विवेकानन्द विद्यालय

स्वामी विवेकानन्द विद्यालय आई. आई. टी. कैम्पस के निकट लोधर गाँव में स्थापित है । विद्यालय में के. जी. से लेकर कक्षा 8 तक के बच्चों को शिक्षा प्रदान की जाती है । शिक्षण-कार्य करके सीखने की पद्धति (Learning by doing) के माध्यम से होता है । स्कूल National Institute for open Schooling से संबद्ध है। लोधर एवं आस-पास के गाँव में वर्तमान में लड़कियों के लिए कोई भी विद्यालय उपलब्ध नहीं है जिसके फलस्वरूप इस विद्यालय के आस-पास के क्षेत्र की लड़कियाँ सर्वाधिक लाभान्वित होती हैं ।

अपना स्कूल - अपना स्कूल सचल स्कूल के रूप में कार्य कर रहा है। वर्तमान में स्कूल की लगभग 30 सचल शाखाएँ कार्य कर रही हैं। अपना स्कूल-बिहार, छत्तीसगढ़ एवं उत्तर प्रदेश के कई क्षेत्रों से कानपुर शहर में आकर ईटा-भट्टों पर कार्य करने वाले मज़दूरों के बच्चों को शिक्षित करने का कार्य कर रहा है । इन स्कूलों के माध्यम से लगभग 650 बच्चे लाभान्वित हो रहे हैं । श्रीमती विजया रामचन्द्रन इन शाखाओं का संचालन करती हैं ।

ग्रामीण प्रयोगशालाएं

आस-पास में गाँवों तथा विद्यालयों में विज्ञान के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए वैज्ञानिक प्रयोग एवं श्रव्य तथा दृश्य प्रदर्शिनियों का आयोजन किया जाता है। इनके अतिरिक्त विद्यालयों को टीचिंग लर्निंग किट भी उपलब्ध कराई जाती है।

अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम विज्ञान, गणित एवं भाषाओं आदि विषयों पर अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। शिक्षाविद तथा अनुभवी व्यक्तियों को इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों में व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया जाता है ।

पर्ण कुटी साँई सेवा समिति

इस समिति में संस्थान के संकाय सदस्य, चिकित्सक, विद्यार्थी एवं कर्मचारी शामिल हैं । समिति की मेडिकल सेवासिंहपुर के निकट प्रतापपुर गाँव, जिला कानपुर में स्थापित है । मेडिकल सेवा की यहाँ पर एक सुसज्जित डिस्पेंसरी स्थापित है । प्रत्येक रविवार अपराह्न समिति के सदस्य आस-पास के कई गाँवों के बहुत से मरीजों को निःशुल्क सलाह एवं दवाई वितरित करते हैं ।

अन्य समितियां एवं सभाएं

उपर्युक्त समितियों के अलावा संस्थान में ऐसी अनेक समितियाँ एवं संस्थाएं हैं जो भारत की विभिन्न संस्कृतियों, भाषाओं, संगीत-साहित्य, सद्भाव और समरसता पर केन्द्रित हैं । समय-समय पर संस्थान में ज्ञान-विज्ञान की विविध विधाओं में लब्धप्रतिष्ठ विद्वानों एवं विविध शीर्षस्थ नेताओं को भाषण एवं संवाद के लिए आमंत्रित किया जाता है। इस प्रकार पूरे वर्ष संस्थान में कुछ न कुछ शैक्षणेत्तर कार्यक्रम भी चलता रहता है। ओणम् हो या कालीपूजा, ईद हो या रामलीला संस्थान में सभी सामाजिक/धार्मिक अनुष्ठानों का आनन्द लिया जा सकता है । ये सब मिलकर ही जिन संस्कारों को जन्म देते हैं वही भारतीय संस्कार हैं । विदेशों में रहने वाले पूर्व विद्यार्थी भी इन सब अनुभवों को जीवन में कभी भी नहीं भूल पाते हैं । यही कारण है कि संस्थान ने न केवल उच्च कोटि के अभियंता, वैज्ञानिक और दार्शनिक इस दुनिया को दिए हैं अपितु मानवता और राष्ट्र को शिक्षा देने वाले समाज सेवी, धार्मिक गुरु, राजनैतिक नेता, प्रशासक और व्यवसायी भी दिए हैं, जिनकी एक लम्बी सूची बनाई जा सकती है ।

जगदीश प्रसाद
कनि. तक. अधीक्षक (अनुवाद)
राजभाषा प्रकोष्ठ

मैं साहित्य क्यों पढ़ता हूँ?

कुछ दिन पूर्व जब मेरी भेंट आचार्य श्री नन्दकिशोर जी से आई आई आई टी हैदराबाद में हुई और उन्हें मेरे साहित्य प्रेम के बारे में किसी ने बताया तो तुरन्त उन्होंने प्रश्न किया कि मैं साहित्य क्यों पढ़ता हूँ। मेरे लिए यह एक आकर्षक और रोचक प्रश्न था। इससे पहले मैंने कभी यह सोचा ही नहीं था कि मैं साहित्य क्यों पढ़ता हूँ। धीरे-धीरे मैंने इस प्रश्न पर मनन करना शुरु किया तो परत-दरपरत अनेक रहस्य खुलने लगे। प्रथम दृष्टः मुझे लगा कि साहित्य को पढ़ने के पीछे कुछ सार्वभौमिक कारण होंगे और मुझे अपने आत्मनिरीक्षण के माध्यम से उन कारणों को खोजना है। किन्तु धीरे-धीरे मुझे लगने लगा कि इस प्रश्न का संबंध जितना साहित्य से है उतना ही मुझ से और मेरे संदर्भों से भी है। प्रश्न यह बनता है कि किन संदर्भों में किस प्रकार के लोग किस-किस प्रकार का साहित्य पढ़ते हैं? मेरी अपनी कहानी कुछ इस प्रकार हैः

जब मैं अपने अतीत पर दृष्टि डालता हूँ तो मुझे लगता है कि इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करने तक मेरा साहित्य से कोई अधिक परिचय नहीं था। मैंने 14 वर्ष की आयु में बारहवीं की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। पिताजी की इतनी आय नहीं थी कि हम 6 भाई-बहिन अपने स्कूल के पाठ्यक्रम की सारी पुस्तकें खरीद सकें। मुझे याद है कि बारहवीं की बोर्ड की परीक्षा होते हुए भी ठोस ज्यामिति जैसे कई विषयों की पुस्तकें मेरे पास नहीं थी। सस्ती होने के कारण ज्यामिति की 'मेड ईज़ी' खरीद ली गई थी। मूल पाठ्यपुस्तक मंहगी थी और हमारे नगर (बिजनौर, उ प्र) में सदैव उपलब्ध नहीं होती थी।

बी एस सी में पहुँचते-पहुँचते साहित्य लेखन का भूत सर पर चढ़ गया। पहले-पहले शायद पंत आदि के प्रकार की कोई श्रंगारिक या रहस्यवादी काव्यरचना की होगी और पिताजी को दिखायी, किन्तु उनसे कोई प्रेरणा या प्रोत्साहन की प्राप्ति नहीं हुई। फिर पता नही क्यों गरीबी पर या वीर-रस की कवितायें लिखीं तो लगा अन्दर का कवि जाग रहा है। एक एक दिन में तीन-तीन, चार-चार कवितायें लिखना और घनिष्ट मित्रों को सुनाना रोज का सगल बन गया था। लिखने में कोई खर्चा था नहीं और गरीब परिवार के जो लोग साहित्य पढ़ नहीं सकते केवल लिख सकते हैं उनके लिए ये अनिर्वचनीय शौक बन जाता है। हाँ परिपक्व लेखन के लिये साहित्य पढ़ने की आवश्यकता पड़ती है। नगर में कवि-गोष्ठियाँ और आस-पास के कवि सम्मेलनों में भाग लेने लगा। एक बार एक वरिष्ठ कवियत्री ने मंच पर पूछ लिया मैं पिछले जन्म में भूषण था या कोई और तो बस! दिमाग खराब होना ही था। मौसा जी मुशायरों और कवि सम्मेलनों से जुड़े थे। बड़े-बड़े साहित्यकार उनके घर आते थे और मैं बड़े चाव से उन्हें पानी, चाय और खाना पेश किया करता था। पकाने का काम हमेशा मौसी करती थीं। बी एस सी की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में और अच्छी स्थिति में पास होने पर विष्णु प्रभाकर की एक पुस्तक पारितोषिक में प्राप्त हुई। वह एक अच्छे साहित्य से मेरा पहला परिचय था। मुझे याद है कि दो चार पन्ने पढ़कर मैंने वह नयी की नयी किताब एक मित्र को जन्मदिन के अवसर पर उपहार में दे दी थी। ग्रीष्म अवकाश में एक पड़ोसी मित्र से साहित्य मिलने लगा। वह अपने मित्रों से लाता था और कभी-कभी किराये पर। मुझे उससे पुस्तकें आधे या एक दिन के लिये मिल जाती थी। उस समय दो-तीन महीनों में 100 से अधिक पुस्तकें पढ़ ली होंगी, जिनमें सभी प्रकार की पुस्तकें शामिल थीं। पर मुख्यतः जासूसी उपन्यास और साधारण किस्म के सामाजिक उपन्यास ही थे। एम एस सी करने तक शायद ही पाँच या छः फिल्में देखी होंगी। वो भी तब, जब गाँव के एक फूफा जी आते थे। वे चालू किस्म के उपन्यास पढ़ने और फिल्में देखने के बहुत शौकीन थे। उनके पास हमेशा कोई न कोई मोटा सा उपन्यास रहता था। वे पंचायत सचिव थे और हमारी रिश्तेदारियों में सर्वोच्च पद पर थे।

जैसे समाज और जीवन का सत्य सामने आया वह मुझे मास्टर दिवाकर के समीप ले गया। मास्टर दिवाकर एक समझदार साम्यवादी नेता थे। उनके पास से लेकर मैने मार्क्स, एन्जिल्स और भारतीय साम्यवादियों का लिखा बहुत सा साहित्य पढ़ा। वे मुझे गरीबी, शोषण, अत्याचार आदि पर बहुत ध्यान से समझाते और चाहते थे कि मैं उनके साथ साम्यवादी आन्दोलन में शामिल हो जाऊँ। उन दिनों में एक पत्रिका जिसका नाम सम्भवतः स्वाधीनता था नियमित रूप से पढ़ता था। वे चाहते थे कि मैं सी.पी.एम. का सदस्य बन जाऊँ लेकिन मुझे परिवार के लिए जीना था। एम एस सी करने और कुछ महीनों की बेरोजगारी के बाद (जो कई जन्मों के बराबर थी) जब सरकारी नौकरी लगी और पहली तनख्वाह हाथ में आई तो मैंने लखनऊ में माओ की दो पुस्तकें खरीदीं। एक रिश्तेदार जिनके पास मैं रहता था, उनकी डाँट मुझे आज भी याद है, उन्होंने कहा कि मैं बहुत ही नालायक हूँ। माओ की किताबों की जगह पहले वेतन से माँ के लिये

साड़ी लेकर जाता तो वह कितनी प्रसन्न होतीं।

गंभीर विश्व साहित्य से मेरा परिचय तब हुआ जब मैं आई आई टी बाम्बे में पी एच डी की पढ़ाई कर रहा था। यद्यपि मैं अपने विषयों में ठीक था पर अंग्रेजी में विशेषकर बोलने में इतना कमजोर कि अच्छे घरों के लड़कों के सामने बड़ी बेइज्जती लगती थी। मैने अंग्रेजी सीखने के लिए अंग्रेजी में साहित्य पढ़ना शुरू कर दिया। कुछ समझ में आता था और कुछ नहीं पर अंग्रेजी पढ़कर बहुत संतुष्टि मिलती थी। हिन्दी और उर्दू में काव्य-रुचि तो बनी ही थी। कभी जब मैं उर्दू के प्रसिद्ध कवियों के शेर अपनी अंग्रेजी में अनुदित कर हॉस्टल के दोस्तों को सुनाता तो उनका बड़ा मनोरंजन होता था। उनमें से कई आज भी मेरे पक्के दोस्त हैं। कह सकता हूँ कि अब तक के जीवन में साहित्य पढ़ने के पीछे समाज का ज्ञान प्राप्त करना, अंग्रेजी सीखना और दोस्तों को अपने श्रेष्ठ हिन्दी ज्ञान से प्रभावित करना था। ईश्वर की कृपा से मेरे कई दोस्त मुझे काफ़ी गहरा व्यक्ति समझते थे। किन्तु मैं अपने अन्दर की रिक्तता को देखकर प्रायः बेचैन हो जाता था। मेरे साथ के लड़के और लड़कियाँ मुझे सुधी समझकर दर्शन या किसी गंभीर रहस्य की पुस्तक दे जाते और उनसे बात करने के लिए मैं पढ़ने की और उसे समझने की पूरी कोशिश करता।

आज मैं कह सकता हूँ कि मैने साहित्य को ठीक से कुछ-कुछ व्यवस्थित रूप से और गंभीरता से चयन करके तब पढ़ना शुरु किया जब मुझे आई आई टी कानपुर में प्रवक्ता की नौकरी मिल गई। लम्बे समय तक विज्ञान की पढ़ाई करने के बाद जब परिस्थितियों ने मुझे समाजशास्त्र में प्रवक्ता बना दिया तो मुझे पढ़ाने और शोध पत्र लिखने के लिए साहित्य पढ़ना था। पढ़ने के लिये मैंने तीन प्रकार के साहित्यों को चुना :

1. जनसंख्या गतिकी और विकास
2. समाजशास्त्र के पुरातन और आधुनिकतम सिद्धान्त
3. जीवन और दर्शन संबंधी विचार

जनसंख्या पर पढ़ना विवशता थी क्योंकि यही मेरा पाठन और शोध विषय था। क्योंकि मेरे कई साथी मुझे नौकरी के विषय समाजशास्त्र में बिना औपचारिक शिक्षा वाला मानते थे और कम योग्य भी, तो वह भी पढना ही था। अब इस आयु तक के उत्पन्न हुए जीवन के अर्थ का प्रश्न भी सामने था तो धर्म, अध्यात्म, काव्य और दर्शन पढ़ने की आतुरता भी थी। या यह कह सकता हूँ कि स्वभाव से मेरा लगाव आध्यात्म और प्रेम से है और इस प्रकार के साहित्य की ओर मेरी स्वाभाविक रुचि रही है। एक लम्बे समय तक मैं साहित्य में व्यक्ति और सामाजिक जीवन की बीमारियाँ और उनके निदान ढूँढ़ता रहा हूँ। एरिक फ्रॉम से मैंने पहली बार यह जाना कि व्यक्तिगत जीवन और समाज दोनों ही की समस्याओं का हल प्रेम करने में है। दुर्भाग्यवश मनुष्य हजारों वर्षों से प्रेम पाने और प्रेम प्राप्ति के माध्यम से सुखी होना चाह रहा है। वह चाहता है कि उसे परिवार का प्रेम मिले, समुदाय और राष्ट्र का प्रेम मिले, प्रकृति और ईश्वर का प्रेम मिले। एरिक फ्रॉम ने बताया कि यही मनुष्य के दुःख का प्रमुख कारण है। सुख की कुंजी तो प्रेम करने में है-परिवार से, समुदाय से और राष्ट्र से। आज जब मैं साहित्य पढ़ता हूँ तो मेरा आग्रह यही रहता है कि मैं साहित्य के उन निर्जन कोनों तक जा सकूँ जो एक शान्त फकीर की रहस्यमयी भाषा में बार-बार एक ही बात समझाते हैं प्रेम को बाँट दो सच्चे और जीवन को प्राप्त करो।

पहले की अपेक्षा मैं अब अधिक ही पढ़ता हूँ। गंभीर साहित्य भी और हल्का-फुलका भी। गंभीर साहित्य इसलिए कि उससे शब्दों के खेल खेलने और हम शिक्षकों को शब्दों का जादू बुनने में सहायता मिलती है। अर्थों के स्तर पर अब नया कुछ नहीं मिलता। हल्का-फुल्का साहित्य इसलिए पढता हूँ कि वह जीवन को धरातल से जोड़कर रखता है। अन्यथा संकट बना ही रहता है कि गंभीर साहित्य मनुष्य को एक दूसरे लोक, एक परीलोक में पहुँचा देता है और उसे साधारण समाज से अलग कर देता है। आज मैं साहित्य इसलिए पढ़ता हूँ कि मैं अपने भीतर के असुर तत्व को देख सकूँ, दिव्यता को भूल न जाऊँ और एक साधारण मनुष्य बना रहूँ।

अन्त में मैं यही कहना चाहता हूँ कि साहित्य पढ़कर एक जीव मनुष्य बनता है। साहित्य के पठन-पाठन से उसमें संस्कार आते हैं। जहाँ दर्शन का उद्देश्य मनुष्य को बुद्ध बनाना है, वहीं साहित्य का उद्देश्य उसे बोधिसत्व बनाना है। साहित्य को पढ़कर उसे यह बोध होता है कि उसका मंगल तब तक संभव नहीं है जब तक धरती के प्रत्येक रज-कण का मंगल संभव न हो जाये। भारत की विभिन्न भाषाओं और विदेशी साहित्य दोनों में यह एक बात समान रूप से देखी जा सकती है। स्वयं टालस्टॉय हों, महर्षि अरविन्द हों, प्रेमचंद के भारतदास हों, गार्की की माँ हो, या महाभारत के कृष्ण तभी तो आज भी बोधिसत्व बनकर हमारे सामने खड़े हैं। भगवान से प्रार्थना है कि साहित्य का ऐसा प्रभाव मुझ पर और सारी दुनिया पर पड़ता रहे।

प्रोफेसर अरुण कुमार शर्मा

उन्हें नमन

मूर्ति को नहीं करता नमन,
जो अधरों पर देते मुस्कान,
नहीं देख सकते, जो अन्याय वितान,
अपने पथ पर सदैव करते, चित्त का अवधान
उन प्रशंसनीय व्यक्तित्व को मेरा नमन।

जिन्हें दुःखी पर दया, विषमता पर भी न आता क्रोध
दूसरों पर अन्याय का, किन्तु जो करते प्रतिरोध
हास-परिहास में संतुलन का जिन्हें है बोध
उन संतुलित व्यक्तित्व को मेरा नमन।

जिसने भौतिकता को त्यागा,
यौवन में कर्त्तव्य संभाला
और अपनी ऊर्जा को पहचाना
उस केन्द्रित व्यक्तित्व को मेरा नमन।

जो भीतर के जड़त्व से निकालते कदम
निन्दा में लगी वाणी को रोकते हरदम,
निष्फल करते त्याग, दूसरों का भार वहन
घावों को भर, दुख को करते कम
ऐसे स्वच्छ व्यक्तित्व को मेरा नमन।

अंकुर गुप्ता
शोध छात्र

मेरा प्रारब्ध

यदि मैं यह कहूँ कि मेरे अनुभवों के संचय को आपके सम्मुख पूरा वर्णित करूँ तो शायद भूचाल ही जाएगा, तो यह कोई अतिशयोक्ति न होगी। मेरे प्रारब्ध से जन्मा अनुभव ही कुछ इस प्रकार का है। आप सोच रहे होंगे कि ऐसा क्या भरा है मेरी गठरी में जिसके कथन से बड़े-बड़े तोपची भी अपना सर छुपाने के लिए आतुर हो उठेंगे। वैसे, मेरे अनुभवों की परतों में तीसमार-खाँओं की महान हरकतों और दास्तानों के साथ-साथ कुछ गहरे सदमों का भी समावेश है। जीवन के पचास वर्षों में गंगा में बहुत पानी बह गया। इतना कुछ देख सुन लिया है कि पूरी गाथा बखान करने में तो सदियाँ लग जाएगी। आज संक्षेप में कुछ कहूँगा।

प्रारम्भ करते हैं मेरे सृजन से। मानव मन की रचनात्मकता तथा उसके जीवन की मूलभूत जरूरतों के रहते मेरा निर्माण मानव के द्वारा ही हुआ। यहाँ आपको बताना अनिवार्य है कि मेरी इन्द्रियाँ, मेरे निर्माता मानव की इन्द्रियों की शक्ति से, कहीं ज़्यादा दुर्बल हैं। मैं देख सकता हूँ, सुन सकता हूँ, महसूस भी कर सकता हूँ, लेकिन मैं एक ऐसा चश्मदीद गवाह हूँ, जो न बोल सकता है, न ही कुछ कर सकता है। आत्मचिन्तन करना मेरा स्वभाव है और इसी तारतम्य में आज मौका मिलने पर पहली बार कुछ कहने का प्रयास कर रहा हूँ। ऐसे मौके बार-बार नहीं आते।

मेरे निर्माण के बाद से ही प्रायः शिक्षित कहलाने वाले नवयुवकों के सानिध्य में मेरा वास रहा है। गुजरी अर्धशताब्दी में करीब इतनी ही संख्या के लगभग युवाओं के साथ मैंने समय व्यतीत किया है और उनको बहुत करीब से देखा है। इन युवाओं के दोस्तों से भी मेरा परिचय है। समय के साथ बदलते इन युवाओं के दृष्टिकोण और प्राथमिकताओं का मैनें करीबी अनुभव किया है। मेरी एक और विशेषता है कि मैं अपनी जगह से हिल-डुल नहीं सकता। मेरा खूँटा एक निश्चित जगह गड़ा है। इसी जगह रह कर मैंने अपने अनुभवों को सहेजा है। आने वाले कई वर्षों तक इसी प्रकार युवाओं की परिवर्तनशील जीवन-शैली का मूक साक्षी बनकर जीना ही मेरा प्रारब्ध है। आइए ! मेरे निर्माता के समाज से उत्पन्न, उसी प्रजाति की युवाशक्तियों के बदलते परिवेश पर एक संक्षिप्त नजर डालें।

प्रायः किसी युवा के साथ मैं एक वर्ष बिताता हूँ। अगले चार-पाँच वर्षों तक यह मुझे कभी-कभी दिखता रहता है पर फिर कहीं लुप्त हो जाता है। इस समयावधि में मेरे अलावा इस युवा को, शायद ही कोई इतने पास से देख पाता होगा, जितना कि मैं। कुछ तो मुझे पहली पहचान से ही अपना समझने लगते हैं। इस अपनत्व के भाव के रहते मुझसे शालीनता का बरताव करते हैं। मेरा विशेष ध्यान रखते हैं। यह आपसी जुड़ाव की नींव इन युवाओं को एक विशेष संतोष प्रदान करती है, ऐसा मैं अनुभव करता हूँ। ऐसे संवेदनशील युवकों के विपरीत, कुछ युवक ऐसे होते हैं जिनका आलम प्रारम्भ से ही बेरुखा होता है। जुड़ाव की कमी हर पल सताती है। निरादर और उपेक्षा का वातावरण मेरे अचल जीवन को अत्यन्त निरुत्साहित करता है। ऐसे शिक्षित युवा मित्रों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि कैसी होती है? ये क्यों अपने वातावरण से जुड़ाव महसूस नहीं करते ? यह जानते हुए भी कि मैं उनकी जीवन - रक्षा के बारे में सदैव तत्पर रहता हूँ, क्यों ये मेरी सदैव उपेक्षा करते हैं? पर जैसा कि मैने कहा, मैं कुछ बोल नहीं सकता और कुछ कर भी नहीं

सकता। यह मेरे जीवन का सत्य है। केवल देखना है, सुनना है, और सहन करते हुए अन्तर्मन में झाँकते रहना है। अनुभवों की पोटली बढ़ती जाती है और निरंतर यह बताती है कि परिवर्तन ही जीवन का एक अपरिवर्तनशील सत्य है। इस ब्रह्मनियम को मेरे सिवाय और कौन जानता है? खैर ! बात को आगे बढ़ाते हैं।

कुछ युवामित्र 20-25 वर्षों के बाद मुझसे मिलने एक बार फिर आते हैं। इतने अरसे बाद प्रायः इन अधेड़ों के परिवारों को देखने का मौका भी मुझे मिल जाता है। वे मेरे अस्तित्व की ओर कई बार भावानात्मक दृष्टि से देखते हैं। कुछ तो बड़े बदले-बदले से प्रतीत होते हैं। आश्चर्य होता है कि यह वही मनोज है जिसे पच्चीस वर्ष पूर्व मैंने पचासों बार नंगा देखा था (उसकी और भी कई हरकतें मुझे ज्ञात हैं पर यहाँ उनका बखान करना उचित न होगा)। भाई साहब क्या-क्या हरकतें करते थे, उन दिनों । तौबा-तौबा ! जाने भी दीजिए, आज तो लाट साहब बना अंग्रेजी में बात करके अपने बच्चों पर रौब जमा रहा है। ज़रा आज इसका टीम-टाम तो देखिए। फटीचर सा चूहा लगता था जब पहली बार मुझसे मिला था। फिर दो वर्षों बाद एक-दो बार फिर दिखाई दिया था। इस बार दो उंगलियों के बीच का एक पुंगी थी जिसके एक ओर आग थी और दूसरी ओर ये चूहा, जो अब गधा नज़र आ रहा था। मुँह से धुँआ निकाल-निकाल कर पूरे माहौल का सत्यानाश कर दिया था।

मेरे कई सहचर किसी अदृश्य शक्ति को पूजते हैं। उससे डरते भी हैं। कुछ उस 'भगवान' को नहीं मानते। कुछ पहले-पहल बड़े भगत बनते हैं, और कुछ समय बाद 'अहम् ब्रह्मास्मि' का जाप करते हैं । उनका यह आपसी संबंध वास्तविकता में कैसा है यह मैं आज तक पूर्णतः जान नहीं पाया हूँ। संतोष, जब पहली बार मुझसे मिला था, बड़ा सीधा-सादा सुशील लगता था। आते ही मेरे सम्मुख भगवान की एक मूर्ति स्थापित की थी। शुरू-शुरू में रोज पूजा किया करता था। उसके बाद रेडियो पर हिन्दी गाने सुनता था। कुछ समय बाद अंग्रेजी गानों की धुनें गुनगुनाने का प्रयास करने लगा। पूजा-पाठ कम होने लगी। भगवान की मूर्ति पर धूल की परत साफ दिखने लगी। जाने इस सज्जन को क्या हो रहा था?

धीरे-धीरे स्थिति इतनी बिगड़ी कि भाईसाहब सप्ताह में चार दिन नहाने की रस्म को ही अपनी श्रद्धापूर्ण कर्मयोगी पूजा समझने लगे। 'कम से कम नहाता तो हूँ! मेरे अन्य मित्र तो .....'। अंग्रेजी गानों नें अब तक हिन्दी गानों को रौंद दिया था। अपने मित्र से कहता था, 'यार अंग्रेजी गाने समझ में तो ज्यादा आते नहीं, पर आज का फैशन है, नहीं गुनगुनाऊँगा तो लोग लल्लू कहेंगे'। न जाने आज ये कहाँ हैं और आगे चलकर इनका क्या हश्र हुआ। खैर ! जाने दीजिए। ऐसे कई आये और चले गये।

पिछले कुछ वर्षों से मेरे साथ रहने वाले सभी युवाओं के पास एक छोटा यंत्र दिखाई देता है। यह चंद वर्षों पूर्व नहीं होता था। दिन-रात इसके संग बच्चे कुछ खिलवाड़ करते रहते हैं। इस यंत्र से कुछ बातचीत भी करते हैं। कई बार तो रात-बेरात यह यंत्र बजता रहता है। घंटों बातचीत होती है और खिलवाड़ होता है। एक दूसरे के यंत्र को भी बच्चे निहारते हैं। यह यंत्र इन युवाओं के जीवन का एक अभिन्न अंग सा बन गया है। मैं नहीं जानता कि यह क्या है पर इसके आने से आपसी सम्मुख बातचीत का चलन समाप्त होता दिखाई देता है। आपस में सीधे कम और इस यंत्र के द्वारा ज्यादा बातचीत होती है। बड़ा ताकतवर यंत्र मालूम होता है जिसने सभी पर पूर्ण वशीकरण स्थापित कर लिया है। खैर, जाने भी दीजिए। मैं क्या जानूँ इस नई तकनीक के बारे में। शायद यही मानवों का उत्थान करे। इन्हीं यंत्रों से वह महामानव बनने का सपना साकार करे। मानव-मानव का आपसी संबंध विच्छेद कर, यह मानव-यंत्र का वार्तालाप इन युवाओं को कहाँ लेकर जाएगा यह मुझे पच्चीस साल के बाद इनके परिवारों की खुशहाली देखकर शायद पता चलेगा।

जैसा कि मैनें कहा, मेरे खट्टे-मीठे अनुभवों में कुछ सदमों का भी समावेश है। तीन वर्ष पूर्व की वह काली रात मैं कभी नहीं भूलूँगा। मेरा युवा साथी मेरे सम्मुख आकर बैठ गया। ज्यादा देर बैठ नहीं पाया। अत्यन्त विचलित लग रहा था। पिछले पखवाड़े से ही उसका मानसिक संतुलन कुछ बिगड़ा जान पड़ता था। इस व्यक्तित्व के ह्रास का मैं साक्षी हूँ। कई दिनों से कोई अन्य व्यक्ति या मित्र उससे मिलने नहीं आया था। आज वह विशेष रूप से अस्वस्थ लग रहा था। बाहर अंधेरा होने पर भी उसने बत्ती नहीं जलाई थी । इस स्थिति में वह लगभग एक घंटा रहा था। उसकी बढ़ती अशांति और अंदरूनी खलबलाहट को मैं साफ देख पा रहा था। लाचार था, करता भी तो क्या? ना बोल सकता हूँ न पूछ सकता हूँ,

केवल देख सकता हूँ। आनन-फानन में फिर वह उठा और जो वह करने लगा, वह दृश्य मैने पहले कभी नहीं देखा था। प्रथम-दृष्टया हृदयविदारक ! मेरी लाचारी का अनुभव मुझे उस दिन जैसा हुआ वह अकथनीय है। काश ! मैं बोल पाता। मेरे मित्र को समझा पाता। मदद के लिए चिल्ला पाता। उसे गले लगाकर उसके सारे दुःखों को समझ पाता। मेरे मित्र की शारीरिक स्थिति को तो देख ही रहा था, उसकी मानसिक दशा भी समझ पाता । उसे बता पाता उन सभी हमसफरों की कहानियाँ जो मेरे साथ समय बिताकर आज जीवन का आनंद ले रहे हैं। जीवन की प्राथमिकताओं को उसे समझा पाता। बता पाता कि जीवन जो उसे मिला है वह कितना बहुमूल्य है। -------श्रीधर का शरीर मेरे सामने पंखे से लटका था। निःशब्द! अब केवल विश्लेषण शेष रह गया है और कुछ नहीं। हाँलाकि मूलतः मैं स्थितप्रज्ञ हूँ, स्थिर और अचल, परन्तु फिर भी श्रीधर का लटकता प्राणहीन शरीर देखकर आज भी रह-रह कर यह सवाल उठता है जो मैं रोज देख पा रहा था वो उसके मानव मित्र क्यों नहीं देख पाए। क्यों मेरा ब्रह्मांड नरेश कहलाने वाला निर्माता इतना दुर्बल हो जाता है। संवेदनशीलता क्या उसके स्वभाव से लुप्त हो चली है? क्यों कोई श्रीधर से मिलने नहीं आया था? श्रीधर की एकांतता की ओर किसी का तो ध्यान जाना चाहिए था। क्यों वह शनैः-शनैः जीवन के प्रति निरुत्साहित होता चला गया था। किन कारणोवश उसने इस अंतिम कृत्य को तरुणावस्था में करने को मजबूर हो गया ?

मेरा प्राकृतिक अंत कब होगा, यह तो मुझे ज्ञात नहीं लेकिन फिर भी मैं चंद और शताब्दियां तो जीना चाहता हूँ। क्या मेरे जीवन-काल में कोई और श्रीधर तो नहीं आयेगा ?

इतने किस्से है मेरे पास सुनाने को कि आपका संयम शायद समाप्त हो जाए। वैसे पिछले पचास सालों में कई अत्यंत कर्मठ, विचारी और एकाग्र मन के युवाओं से भी पहचान हुई है। सुनता हूँ कभी-कभी कि वे जीवन में सफल होकर सदैव नई व ऊँची सफलताएं प्राप्त कर रहे हैं। उनके किस्से मेरा मनोबल बढ़ाते हैं। मेरे अस्तित्व को परिपूर्ण बनाते हैं। उसी आशा के साथ आज मैं मेरे निर्माता की अपेक्षाओं का निर्वाह करने का प्रयास कर सकता हूँ...

हाल-फिलहाल नियुक्त हुए छात्रावास के वॉर्डन साहब, छात्रावास का निरीक्षण करके रात को देर से सोए थे। सुबह-सुबह उनकी पत्नी उनको आवाज़ लगा रही थी। "जल्दी उठिए ना! देखिए तो, आंगन में जो मैंने पीले गुलाब की कलम लगाई थी, उसमें पहली कली खिली है। कितना सुन्दर वातावरण हैं बाहर और आप हैं कि अभी भी सो रहे हैं। उठिये और चलिए बाहर आंगन में। चाय का पानी चढ़ाया है, साथ मिलकर चाय पियेंगे।"

वॉर्डन साहब चौंककर उठे। सर में हल्का दर्द और हाजमें में अस्वस्थता। सुबह-सुबह का कोई अजीब सपना था जो उनके मन पर गहरा बोझ डालकर चला गया था।

कुछ देर बाद, हाथ-मुँह धोकर, चाय पीते-पीते पत्नी से आंगन में बोले 'सुना है कि कई लोगों के सपनों में तो सुन्दर बालाएं और परियाँ आती हैं पर मुझे तो आज एक विचित्र सपना आया। मेरे छात्रावास का एक खाली कमरा मुझसे वार्तालाप कर रहा था..... नवसृजित गुलाब की कली सुबह के निर्मल वातावरण में ठंड़ी मंद हवा में डोल रही थी। एक नये दिन की शुरुआत।'

डॉ समीर खांडेकर
यांत्रिक अभियांत्रिकी

परीक्षा

आज परीक्षा है,
सभी जुटें हैं,
सभी सतर्क हैं,
क्षमता से कई गुना प्रयत्नशील
सबको इन्तजार है,
एक अच्छे परिणाम का!
पर प्रश्नों की भरमार है।

आह! घंटी बज गई।
सबकी सांस थम गई।।

आ गया, आ गया,
परिणाम आ गया,
ये प्रथम आ गया
वो फेल हो गया

फेल होने वालों
इसे स्वीकार लो,
गलतियाँ सुधार लो,
यही परीक्षा है
जिन्दगी परीक्षा है।

सुकर्मा थरेजा
आईआईटी कैम्पस

शहीदों के परिवार की व्यथा

हर रात चाँदनी कैसे हो गर न हो सैनिक सरहद पर।
कैसे मनेगी ईद दीवाली, कैसे होगी होली, मोहर्रम

सजी सेज पर सजनी बैठी राह ताकती साजन की
ख़बर मिली तो समझ गई अब चूड़ी टूटी हाथों की
मेंहदी का रंग अभी न छूटा बिंदिया छूटी माथे की
माँग मैं अपनी कैसै भरूँ जब साँसे टूटी साजन की
तुम गये तो तेरे साथ गया, मेरा भोला और अल्हड़पन
कैसे बजेगी शहनाई गर न हो सैनिक सरहद पर।

दीदी बैठी सोच रही सोते से जिसे जगाती थी
लोरी गाकर थपकी देकर जिसको कभी सुलाती थी
छोटी बहना सोच रही अब डोली कौन उठायेगा
छेड़छाड़ कर टोक-टाककर मुझको कौन रुलायेगा
तुम गये तो तेरे साथ गया सावन का रक्षा बंधन
कैसे बंधेगी राखी गर न हो सैनिक सरहद पर।

माँ बाप हैं बैठ सोचते कैसे बहू घर लायेंगे
किसके बच्चों को गोदी में अपनी खिलायेंगे
तुम गये तुम्हारे साथ गया मेरे सपनों का संवत्सर
कैसे देखोगे सपने गर न हो सैनिक सरहद पर।

अनिल पाण्डेय
परियोजना सहायक

स्वस्थ जीवन के सात सूत्र

आम धारणा यह है कि महज बीमार ना होना ही स्वस्थ होना है परन्तु यथार्थ में अच्छे स्वास्थ्य का अर्थ जीवन में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक एवं आध्यात्मिक अनुकूलता का संतुलन होना है और इन सारे अवयवों में से किसी एक का भी असंतुलित हो जाना मनुष्य को रुग्ण (बीमार) बना देता है। इस तथ्य से एक बात और निकलती है कि स्वस्थ शरीर के साथ, स्वस्थ सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश बने, यह भी उस संस्था का उत्तरदायित्व होना चाहिए जो आम जन-जीवन को स्वस्थ बनाना और देखना चाहती है। स्वास्थ्य विशेषज्ञों के साथ-साथ समाज कल्याण और अर्थ विशेषज्ञों की मिली- जुली समग्र सोच ही सफल नीतियाँ बना सकती हैं। जो स्वस्थ नागरिक, समाज और राष्ट्र का निर्माण कर सकें।

परन्तु इस लेख में मेरा प्रमुख उद्देश्य व्यक्तिगत स्तर पर कुछ मूल बिन्दुओं पर ध्यान आकृष्ट करना है जो स्वस्थ जीवन के लिए अत्यावश्यक है। अतः मैं उन्हीं तथ्यों तक ही अपना विचार सीमित रखना चाहूँगा। मेरे विचार में स्वस्थ जीवन की प्राप्ति के लिए निम्न सात सूत्रों का पालन काफी हद तक सहायक होगाः

1. संयमित दिनचर्या
2. संतुलित भोजन
3. समुचित व्यायाम
4. व्यसन-विहीन जीवन
5. सुरुचिकर साहित्य पाठन
6. लक्ष्यनिष्ठ सोच
7. दूसरों से तुलना और ईर्ष्या से बचना

1. संयमित दिनचर्या

आज के युग के द्रुतगामी जीवन में हमारे लिए अपनी दिनचर्या संयमित रखना अत्यावश्यक है। हमारे सोने और जागने का समय, भोजन का समय, कार्य का समय, परिवार के लिए समय और मनोरंजन के लिए समय सब कुछ समावेशित होना चाहिए और जहाँ तक हो सके समयबद्ध होना चाहिए। हम में से बहुतेरे अपने को बस काम करने की मशीन बना लेते हैं और सुनहरे कल की मृगतृष्णा में आज के वर्तमान को खो देते हैं।

2. संतुलित भोजन

बात फिर वही आ जाती है कि अपनी जवानी में हमारे पास खाने का (और सही खाने का) समय नहीं मिलता और उम्र बढने के साथ-साथ हम खाने लायक नहीं रह जाते। युवावस्था में फास्ट फूड और फ्राइड फूड हमें अच्छे लगते हैं और हमारी व्यस्तता में फिट बैठते हैं, कहीं ना कहीं हमारी आधुनिकता से संक्रमित सोच में भी वही उचित दिखते हैं। नतीजतन पच्चीस साल की उम्र में नौजवान छात्र पहले तो उच्च रक्तचाप का शिकार होता है और व्यस्तताएँ इतनी हो जाती हैं कि उसकी भी न तो फिक्र कर पाता है न ही उपचार और धीरे-धीरे मधुमेह जैसी घातक बीमारियों को भी अपने शरीर में आश्रय देता है। भोजन के मामले में अब शुद्धता भी एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय है। खाद्य पदार्थों के व्यापारी मुनाफाखोरी के चक्कर में मिलावट करते हैं पर कीमत तो बेचारा शरीर चुकाता है। मेरी राय है इन सभी बिन्दुओं पर गौर करें और समुचित उपाय करें कि जहाँ तक हो सके शुद्ध पदार्थ ही आप के घर में प्रविष्ट हों। यदि

घर में मसाले वाली चक्की लानी पड़े या वर्ष में एक बार स्वयं खड़े होकर सरसों का तेल निकलवाना पड़े या इसी प्रकार के थोड़े प्रयास से बड़े फायदे के लिए कुछ काम करने या करवाने पड़ें तो हमारे द्वारा खर्च की गई ऊर्जा, समय या धन की बर्बादी कदापि नहीं होगी।

3. समुचित व्यायाम

हम में से ज्यादातर व्यक्ति अपनी दिनचर्या में कोई भी शारीरिक श्रम नहीं करते, घर में बैठे रहते हैं, गाड़ी में बैठ जाते हैं,गाड़ी से उतर कर दफ्तर में बैठ जाते हैं और बैठे रहते हैं और खाते रहते हैं। ऐसी दिनचर्या में समुचित शारीरिक श्रम (व्यायाम) का समावेश अत्यावश्यक है। व्यायाम से न केवल रक्त का संचार बढ़ता है, बल्कि जोड़ और माँसपेशियाँ मज़बूत होती हैं। रक्त-संचार बढ़ने से शारीरिक स्फूर्ति तो आती ही है, मस्तिष्क की कार्य प्रणाली उर्जित होती है और मनुष्य की कार्यक्षमता दोगुनी हो जाती है। थकान का नाश होता है और शरीर की प्रफुल्लता बढ़ती है। सौभाग्य से कतिपय योगाचार्यों और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के संयुक्त प्रयास से योगासन और प्राणायाम जन-जन में पहुँचाया जा रहा है। मेरा सोचना है कि इन विधाओं के नियमित अभ्यास से निश्चित रूप से हम अपने स्वास्थ्य में गुणात्मक सुधार ला सकते हैं । बस आवश्यकता है तो एक मजबूत इच्छाशक्ति की और अपने व्यस्त जीवन से कुछ समय नियमित रूप से इन कार्यों के लिए आरक्षित करने की।

4. व्यसन विहीनता

आजकल की युवा पीढ़ी व्यसनों को आधुनिकता का पर्याय मानने लगी है। सिगरेट और मदिरा सेवन करने वाले स्मार्ट समझे जाते हैं और जो मना कर देता है उसे आउटकास्ट कर दिया जाता है या फिर अपनी कमजोर इच्छाशक्ति के कारण वह बेचारा आत्मसमर्पण कर देता है और तथाकथित स्मार्टों की जमात में मजबूरन शामिल हो जाता है। इनसे बड़े व्यसनी तो कोकेन, चरस, गाँजा तथा ब्राउनशुगर जैसे नशीले पदार्थों को लेकर अपने जीवन का सत्यानाश करते हैं। स्वस्थ जीवन का एक मूल सूत्र निर्व्यसनी होने में है और व्यसन से दूर रहने का मूल मंत्र है मजबूत इच्छाशक्ति।

5. सुरुचिपूर्ण साहित्य-पाठन

आजकल परिवार और समाज में चरित्रहीनता प्रत्यारोपित करने के लिए यदि कोई चीज़े सबसे ज्यादा उत्तरदायी है तो वह है टेलिविज़न। घर-घर के अन्दर प्रविष्ट हो चुका यह एक उपकरण बच्चों और युवाओं के लिए कितना घातक है यह सोच कर मुझे तो स्थिति भयावह लगती है । स्वस्थ तन के साथ स्वस्थ मन भी होना चाहिए और इसके लिए विशेषतः युवा दम्पतियों से मेरा विशेष आग्रह है कि वे अपने बच्चों में बाल्य काल से ही सुरूचिकर एवं ज्ञान वर्धक पुस्तकें पढ़ने की आदत डालें और हो सके तो टेलिविज़न से बचें या फिर उसे देखने का समय-सीमा निर्धारित करें परन्तु इसके लिए बच्चों के साथ साथ उन्हें स्वयं भी कठोरता के साथ अनुशासित होना पड़ेगा ।

6 लक्ष्य-निष्ठ सोच

जीवन को स्वस्थ और सुखमय बनाए रखने के लिए प्रत्येक व्यक्ति की सोच रचनात्मक होनी चाहिए और उसके जीवन के लिए एक लक्ष्य निर्धारित होना चाहिए। जब हम लक्ष्य-विहीन होकर जीवन यापन करते हैं तो हम उत्साह विहीन भी हो जाते हैं और निरूत्साहित जीवन कभी स्वस्थ और सुखमय हो ही नही सकता। बहुधा देखा जाता है कि युवा जीवन में तो लक्ष्य भी होते हैं और उत्साह भी होता है और इसीलिए युवा जीवन ऊर्जापूर्ण और प्रगतिशील होता है। जो लोग अपने लक्ष्यो को जीवंत रखते हैं वे अधेड़ उम्र और जीवन के उत्तरार्ध में भी स्वस्थ और प्रफुल्लित दिखते हैं वरना उम्र बढ़ने के साथ आदमी बस जीवन ढ़ोने की गाड़ी बनकर रह जाता है।

7 दूसरों से तुलना और ईर्ष्या से बचना

हमारी मानसिक स्वस्थता के लिए यह महत्वपूर्ण है कि हम दूसरों से अपनी तुलना करना बंद करें और दूसरों के पास होने वाली वस्तुओं को ध्यान मे लाकर ईर्ष्या भाव ना लायें। हालाँकि ऐसे उपदेश देना आसान होता है परन्तु जीवन में उतारना मुश्किल। फिर भी मैं बहुत ज़ोर देकर इस बात को कहना चाहूँगा कि इस राय को जीवन में प्रयोग करना असम्भव नहीं है यदि हम इस बात को अपने व्यक्तित्व में सजग होकर समावेशित करें तो पायेंगे कि दूसरों के प्रति हमारी नकारात्मक सोच वाष्प की तरह उड़ जाएगी और जीवन में जिस आनन्द का संचार होगा उसका स्वाद अद्भुत होगा, जिसे शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता। मेरे कहने से एक बार सजग होकर प्रयोग करना तो शुरु कीजिए और अपने जीवन का आनन्द लीजिए।

डॉ ओ पी मिश्र
मुख्य चिकित्साधिकारी

धन की कीमत

आज इस खास दिन पर एक खास बात बताना चाहता हूँ,
और अपने मन के विचार अपनी जुबाँ पर लाना चाहता हूँ।
आज हर इन्सान रह जाता है सिर्फ इन सांसारिक चौर भौर
में ले जाना चाहता हूँ उसको कुछ गहराइयों में
जहाँ उसे आँसू न बहाने पड़े यूँ रो-रोकर।
आज हर इंसान सोचता है कि पैसा ही सब कुछ है,
अरे, पैसा ही सब कुछ होता तो हर अमीर आदमी
सुखी होता
और माँ-बाप, भाई-बहन, पति-पत्नी ये सब कुछ
न होता।
होता तो सिर्फ पैसा होता, और सिर्फ पैसा होता।
तो आज मैं पैसे से होने वाले पागलपन को
समझाना चाहता हूँ,
और अपने जीवन के विचार अपनी जुबाँ पर
लाना चाहता हूँ।
आज कितना भी धन कमाओ, और धन कमाना पड़ेगा,
तो क्या कभी सोचा कि इसका अन्त कहाँ होगा।
कभी होगा भी या नहीं,
कभी नहीं होगा, कभी नहीं होगा।
तो जिसका कोई अन्त ही नहीं, जिसको कमाने से भूख
भरती ही नहीं,
जिसको कमाने से संतुष्टि मिलती ही नहीं,
ऐसे धन को क्यूँ कमाएं
जिसके लक्ष्य तक कभी न पहुँच पाएं
तो आज मैं इस धन की बढ़ती भूख को
समझाना चाहता हूँ
और अपने जीवन के विचार अपनी जुबाँ पर
लाना चाहता हूँ।
आज हर इन्सान कहता है ये तेरा है ये मेरा है,
ये इसका है, ये उसका है,
क्या कभी गहराईयों में जाकर सोचा कि असल में
ये किसका है।
किसी का नहीं है, किसी का नहीं है।
कोई नहीं सम्मान करता है यहाँ, देते हैं सब गाली,
क्यूँकि तूने पूरी जिन्दगी कमाया धन और की बेईमानी।
अरे कमाना है तो जग में अपना नाम कमा,
ऊँचा नहीं तो नीचा कमा,
पर झूठा कभी ना कमा
क्योंकि धन दौलत और झूठ से पाई जीत भी तो
झूठी होती है।
वो भी धोखा दे जाती है और अन्त में असली जीत भी तो
सच्चाई की होती है।
तो आज मैंने इस धन और कर्म के अन्तर को
समझाना चाहा है,
और अपने जीवन के विचारों को अपनी जुबाँ पर लाना चाहा
है।

दुष्यन्त कुमार ठाकरान
शोध-छात्र

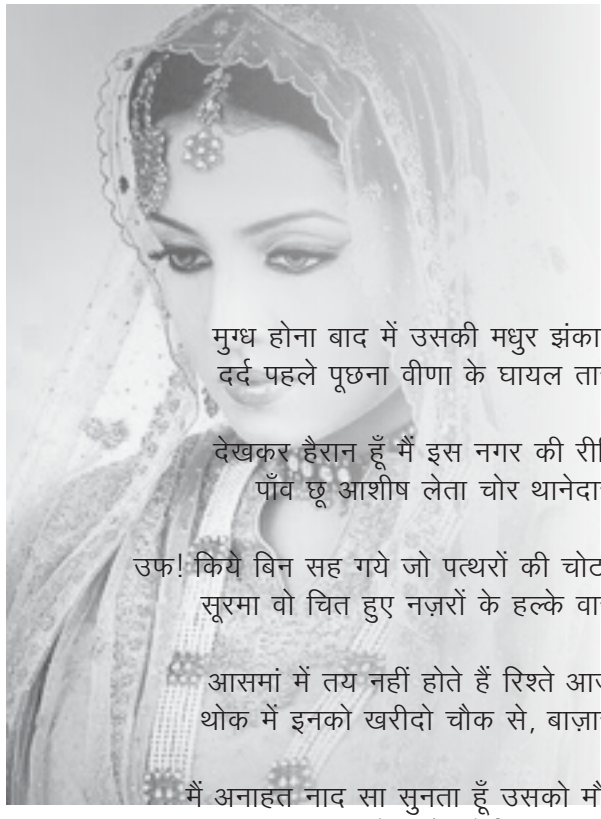

गज़ल

मुग्ध होना बाद में उसकी मधुर झंकार से ।
दर्द पहले पूछना वीणा के घायल तार से।।

देखकर हैरान हूँ मैं इस नगर की रीतियाँ ।
पाँव छू आशीष लेता चोर थानेदार से।।

उफ! किये बिन सह गये जो पत्थरों की चोट को ।
सूरमा वो चित हुए नज़रों के हल्के वार से।।

आसमां में तय नहीं होते हैं रिश्ते आजकल।
थोक में इनको खरीदो चौक से, बाज़ार से।।

मैं अनाहत नाद सा सुनता हूँ उसको मौन हो।
रात भर आवाज देता है कोई उस पार से ।।

जो सहारा तू न दे तो दुख के इस तूफान में ।
कैसे उबरे जिंदगी की नाव यह मंझधार से ।।

भक्त को रोका गया जब जन्म के आधार पर।
लौटता था देवता भी मंदिरों के द्वार से।।

रवि पाण्डेय
शोध-छात्र

संस्थान के खिलाड़ी भा.प्रौ.सं. खड़गपुर में : दिसम्बर-2011

झलकियाँ हिन्दी-दिवस समारोह 2011

सतर्कता जागरूकता सप्ताह पर शपथ-ग्रहण करते हुए कर्मचारीगण

शिक्षक-दिवस समारोह

विगत-स्मृति

आज बहुत दिनों के बाद मुझे बगीचे में बैठने का समय मिला है। पहले बगीचे में बैठने की मेरी बहुत रूचि थी, हरियाली घास के ऊपर छोटे-छोटे सुन्दर नवदुल्हन जैसे कीड़ों को देखने से मुझे ईर्ष्या आती। हाय! कि ये लोग कितने स्वाधीन हैं और कितने आनन्द में चल रहे हैं और अपने जीवन को आनन्द से गुजार रहे हैं। यहाँ पर हम लोग बन्दी की तरह जीवन काट रहे हैं। हम लोग हर समय बस काम की जन्जीर में बंधे हुए हैं। जैसे सुबह बिस्तर से उठो, बच्चों के लिये नाश्ता बनाओ, पति के लिये बेड-टी, ससुर के लिये पूजा के फूल और सास के लिये गरम पानी इत्यादि कामों में फंस जाते हैं, ये सब काम करते-करते कब दिन ढ़ल जाता है और रात हो जाती है पता ही नही चलता है।

आज अचानक ठंडी हवा के नर्म स्पर्श से मेरा शरीर काँप उठता है जैसे कि असीत के पहले स्पर्श में हुआ था; आज शरीर से जवानी कहाँ चली गई वो पता ही नहीं चला, इतनी दूर चली गई हमारी जवानी जिसका आकलन करना नामुमकिन है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि बगीचे में खिल रहे फूल सब आपस में बात कर रहे हैं उन फूलों की आँखों में समाया हुआ स्वप्न अभी तक बरकरार है। इस सोच में मैं इतना खो गई थी कि कब आकाश में अन्धेरा छा गया पता ही नहीं चला। मैंने जब आकाश की ओर देखा तो उभरता हुआ आधा चन्द्रमा मेरी विवशता के ऊपर मानो हँस रहा था। मेरे मन के अन्दर पिछली स्मृति की झलक अपने आप झाँक रही थी आज की शाम की तरह ही मैंने अनेक शाम इन्द्रावती में गुजारी थी।

दस साल पहले की बात है , जब हम इन्द्रावती में रहने आये थे । उस समय हमारी शादी के दो साल हुए थे। इधर हमको पहले अच्छा नहीं लगता था क्योंकि हम यहाँ पर किसी को भी नहीं जानते थे। हम किसी के साथ मिल नहीं पाते थे क्योंकि मैं शर्मिली थी और इसके अलावा मेरी सास को लोगों के साथ न मिलने की पाबन्दी मुझे जकड़ कर रखी थी। आने के समय उन्होंने मुझे बहुत उपदेश दिये थे, जैसे कि अन्जान आदमी के साथ बात मत करना, किसी के ऊपर विश्वास मत करना, किसी के बातों में न फँसना इत्यादि।

इसके अलावा मुझे घरेलू कामों में रुचि नहीं थी और मेरे पति हमेशा अपने दफ्तर के कामों में व्यस्त रहते थे इसलिये मुझे समय बिताने के लिये बहुत ही मुश्किल लगता था और पड़ोसी लोग भी आकर मुझसे नहीं मिलते थे । मुझे एक-एक पल जैसे एक-एक साल लगता था लेकिन धीरे-धीरे मुझे इस जगह की हवा, दूर-दूर तक वनों की हरियाली और पहाड़ों की खूबसूरती अच्छी लगने लगी, जिससे मन में आनन्द की एक लहर उठने लगी थी। अब तक उस जगह के प्रति कमजोरी महसूस होती है। आज भी उस जगह का चित्रपट हमारी आँखों में समा जाता है। अभी भी याद है जब हम पहली बार इन्द्रावती आये थे उस समय नया घर बसाना बहुत ही कठिन था। अभी भी हम सोचते हैं तो मेरे रोम-रोम काँप उठते हैं। ट्रक से उतारे हुए सामान को जब मैं देख रही थी तो मुझे चक्कर सा आ रहा था, दिमाग काम नहीं कर रहा था कि कैसे इन सब सामान को घर में सही ढ़ंग से रखें, जैसे कि पलंग को कहाँ पर रखना है, टेबल को कहाँ पर बिठाना है, आलमारी को कहाँ ठहराना है और सिंगारदानी को कहाँ पर रखना है इत्यादि। ऐसे सोचते-सोचते मेरे दिमाग में भारीपन लग रहा था जैसे मेरे सिर पर एक सौ कुन्तल का वजन रख दिया गया था। जितना भी काम करती थी वह काम खत्म ही नहीं हो रहा था। मानों काम का पहाड़ मेरे ऊपर टूट पड़ा हो। काम करते-करते कब शाम हो गई मुझे पता ही नहीं चला। दरवाजे में खट-खट की आवाज सुनने के बाद मुझे पता चला कि शाम हो चुकी है जब हमने दरवाजा खोला तो एक औरत खड़ी थी, उनको पड़ोसी समझ कर मैंने उन्हें बैठने के लिये आमंत्रित किया उस समय मेरा शरीर पसीना-पसीना हो रहा था। इसको देखकर वह बोलीं बेटी 'इतनी जल्दी क्यों कर रही हो? यह तुम्हें जोखिम में डाल सकता है। धीरे-धीरे करने से भी काम बन सकता है हो सकता है कि तुमको सब सामान सही तरीके से रखने के लिये पाँच या छः दिन लग सकते है इसमें हर्ज ही क्या है धीरे-धीरे काम करने से दिमाग में तनाव उत्पन्न नहीं होता है परन्तु दिमाग के सही ढंग से काम करने से सब काम आसानी से निपट जाते हैं। न शरीर को थकान होती है और न मन को। ऐसा कह कर उन्होंने आशीर्वाद मुद्रा में मेरे सिर को स्पर्श किया। मेरे शरीर में नये जीवन का उत्साह उभरा, मन में विश्वास की बारिश की धारा बरसने लगी थी। जब मैंने उनके चेहरे को देखा तो मुझे ऐसा आभास हुआ जैसे कि उनके मुख मन्डल पर अपनेपन का गुलाब खिल रहा था और उनके माथे पर चमकती हुई लाल गोल सिंदूर की बिन्दी अच्छी लग रही थी लगा कि जैसे मेरे सामने दुर्गा माता खड़ी थीं। उन्होंने मेरे हाथ को पकड़ कर मुझे अपने पास बिठाया और स्वस्थ होने के लिये प्रेरित किया था। मेरे हाथ को अपने हाथ में लेकर बोलीं कि बेटी चिन्ता मत करो मैं तुम्हारी मदद कर दूँगी । ऐसा कहकर उन्होंने कमरे की सफाई करना शुरू कर दिया। हमने उनको काम करने के लिये बहुत मना किया लेकिन वो नहीं मानी। मेरे मन में घुटन सी हो रही थी कि इतने उम्र की औरत मेरे इस काम में सहयोग कर रही थी। इस सोच में हम पड़े थे कि

कैसे उनको काम न करने के लिये रोकें। अचानक दरवाजे से आवाज आयी। आवाज सुनके मैंने दरवाजा खोला तो मेरे पति असीत सामने खड़े होकर मुझे उत्साह के साथ देख रहे थे। वे मुझे बाँहो के बन्धन में लेने की कोशिश करने लगे; मैंने सहमे-सहमे उनसे कहा कि ऐसा मत करो अंदर पड़ोसन बैठी हैं। इनको देखने के बाद वो औरत वापस अपने घर चली गई। मेरी पड़ोसन सुनीता देवी दूसरे दिन दोपहर को फिर मुझे मदद करने आ गयी थीं वह अपने साथ मेरी मन पसन्द सोहन पापड़ी लेकर आयी थीं, मेरे मना करने के बावजूद भी मुझे प्यार से खिलाया और काम में हाथ बटाया था। उनका आना-जाना हमारे घर में लगातार चलता रहा ऐसा हो गया था मानो मैं उन्हें अपनी माँ से भी ज्यादा प्यार करने लगी थी। हम दोनों में अटूट सम्पर्क बढ़ने लगा था लेकिन मेरे पति असीत को ये सब पसन्द नहीं था। मुझे असीत की बातो में दम दिखाई नहीं देता था, कभी-कभी लगता था कि सुनीता देवी के प्रति असीत की भावना सही नहीं थी। असीत के नापसन्दी के बावजूद भी मैंने उनके घर पर आना जाना शुरू कर दिया था। लेकिन असीत का कहना था कि मैं दूसरे पड़ोसी विपिन बाबू जी की औरत के साथ मेल-जोल करूँ, जबकि उसका बोलना-चालना मुझे सही नहीं लगता था क्योंकि वो हमेशा कहती थी कि उनके पति उन्हें कितना प्यार करते हैं; उनके लिये क्या-क्या गहने बनवाये हैं। उनके पति उनके बिना एक क्षण भी नहीं रह सकते, उनके पास सब कुछ है। जैसे कि फ्रिज, टीवी, रेडियो, वी.सी.पी., टेलीफोन इत्यादि, मुझे ऐसा प्रतीत होता था कि मुझे नीचा दिखाने के लिये ऐसे ही बातें बना रही है। असीत का कहना भी सही था क्योंकि विपिन जी उनके सबसे अच्छे मित्र थे और वो हमारे घर लगभग हर दिन आते थे। वो चुटकुले सुनाकर हँसाते थे और उनके चेहरे पर हमेशा मुस्कुराहट की झलक दिखाई पड़ती थी। उनके स्वभाव में कभी गर्व या अहंकार का नामो-निशान दिखाई नहीं देता था। उनके साथ मिलने के बाद मुझे आश्चर्य हुआ कि वो ऐसी औरत के साथ कैसे जिन्दगी गुजार रहे हैं। उनको मेरे रसोई का खाना बहुत पसन्द आता था, जब वो शाम को हमारे घर पर आते थे तो दो कप चाय पिये बगैर कभी भी नहीं उठते थे। कभी-कभी वो बातचीत के माध्यम से मेरी तारीफ़ करके कहते थे भाभी जी आप कैसे खाना बनाती हैं जो इतना स्वादिष्ट होता है और मेरी औरत को कुछ भी नहीं आता। हाँ सिर्फ सजने सँवरने के सिवा। जब मैं उनकी प्रशंसा सुनती थी तो मेरा मन गर्व से भर जाता था। कभी-कभी वो हमारे रसोई घर तक पहुँच जाते थे और कहते थे आप इतना काम दिन-रात कैसे कर लेती हैं, आज तो मेरा मन पकौड़े खाने को हो रहा है। पकौड़े बनाइये न।

उनका हाव भाव पहले मेरे मन को अच्छा नहीं लगता था मगर उनके साथ बहुत दिन तक मिलने जुलने के बाद मैं उनके साथ घुल-मिल गई थी। उनकी हर बात मन को आनन्द देती थी। जब वो नहीं आते थे तो मन बेचैन हो उठता था लगता था हमने कुछ खो दिया है विपिन जी के साथ मेरा मिलना-जुलना असीत ने कभी भी नापसन्द नहीं किया था।

उस दिन शाम होने वाली थी और असीत दफ़्तर से वापस घर नहीं आये थे। मेरा मन घबरा रहा था क्योंकि वो कभी भी इतनी देर में नहीं आते थे। क्या करना चाहिये मेरे दिमाग में नही आ रहा था अचानक मेरे मन में विचार आया कि मैं अपनी पड़ोसन सुनीता जी के घर जाऊँ और पूछू कि क्या किया जाय? ऐसा सोचकर मैं उनके घर जाने के लिये कोशिश कर ही रही थी तभी मैंने देखा कि सुनीता जी हमारे घर की ओर आ रही हैं। वो मुझे देखकर बोली कि क्यों घबरा रही हो? क्या बात है? मैं रो पड़ी और कहने लगी कि अभी तक असीत दफ़्तर से घर नहीं आये हैं मेरा जी घबरा रहा है वो मेरे सिर पर हाथ रखकर बोली इसमें इतना घबराने की क्या बात है, दफ़्तर में कुछ काम होगा दफ़्तर से वो आ ही रहे होंगे। उसी समय हमारे गेट के खुलने की आवाज आयी तो मैंने देखा कि विपिन जी गेट खोलकर दरवाजे की तरफ़ आ रहे थे। मैं असीत के बारे में पूछने के लिये उनकी तरफ़ गई लेकिन हम दोनों लोगों को देखने के बाद वो फिर वापस जाने लगे। मैंने घबराकर उनको आवाज दिया विपिन जी सुनिये असीत जी अभी भी दफ़्तर से घर नहीं आये हैं। वो बिना बोले चुपचाप खड़े थे मैंने उत्कंठा के साथ उनसे पूछा विपिन जी क्या हुआ है। वो बोले ऐसा कुछ नहीं है बस घर आते समय केवल स्कूटर से गिर पड़े हैं। कोई चिन्ता करने की बात नहीं है। वे अभी अस्पताल में भर्ती हैं। मैं ऐसे ही पुतले जैसी खड़ी थी मुझे अन्धकार जैसा दिखाई पड़ रहा था। वे मेरे इस भाव को देखते हुए बोले भाभी जी आप चिन्ता मत कीजिये सब ठीक हो जायेगा आप मेरे साथ अस्पताल चलिये। मैं अस्त-व्यस्त होकर घर में पहने हुए कपड़ों में ही विपिन जी के साथ अस्पताल जाने के लिये निकल पड़ी। मन में भय और आशंका का तूफान चल रहा था। बहुत सी शंकाएं मेरे मन के अन्दर मेरी इजाजत के बिना मेरे दिमाग में गूँज रही थी। मुझे ऐसा लग रहा था कि असीत लहुलुहान होकर रास्ते में पड़े हैं और मदद के लिये चीख रहे हैं। मैं कभी-कभी मन को सांत्वना देती थी कि असीत को कुछ भी नहीं हुआ है और भगवान से प्रार्थना करती थी कि असीत जल्दी ही ठीक हो जाये और उन्हें कोई गम्भीर चोट न लगी हो। लेकिन मेरा जी बहुत घबरा रहा था।

माथे पर पसीना निकल रहा था, कभी-कभी भाव-प्रवण होकर कहने लगती थी विपिन जी आप थोड़ा गाड़ी और तेज चलाइये। तीन किलोमीटर का रास्ता मुझे तीस किलोमीटर जैसा लग रहा है। मैं बेबसी के साथ सोच रही थी कि मैं कैसे भी जितना जल्दी हो सके अस्पताल पहुँच जाऊँ। ऐसा सोचते-सोचते आखिर में हम अस्पताल पहुँच ही गये तो मेरे दिल का बोझ उतर गया।

लेकिन एक नयी आशंका का बोझ सवार हो गया। मैं घबराई हुई होकर विपिन जी के पीछे-पीछे अस्पताल में मरीजों के कक्ष में, जहाँ पर असीत का बिस्तर लगा था, उधर जाकर पहुँची। मैं असीत को देखकर थोड़ा आश्वस्त हुई और ऐसा लगा जैसे मेरे शरीर में जान आ गई। लेकिन असीत की पट्टियाँ और चोटों को देखकर मैं अपने आप को सम्भाल न सकी और बच्चों की तरह रोना शुरू कर दिया। विपिन जी मेरे माथे पर अपना हाथ रखकर बोले, भाभी आप चिन्ता मत कीजिए असीत को कुछ नहीं हुआ है बस मामूली सी चोटें आई हैं जो दो-तीन दिन में ठीक हो जाएंगी। मुझे रोते हुए देखकर नर्स लोगों की भीड़ खड़ी हो गई उसी समय नर्स और मरीज की भीड़ को देखकर डॉक्टर भी आ पहुँची और चिल्लाने लगी इधर क्या हो रहा है यहाँ पर इतनी भीड़ क्यों है। आप लोग इधर से हटिये मैंने जब डॉक्टर को देखा तो मेरा रोना बन्द हो गया और मैं नतमस्तक होकर बोलने लगी; डॉक्टर साहब मेरे पति को बचा लीजिए, इनके बिना मेरा जीना निरर्थक है। दया पूर्वक इनका इलाज करके इन्हें जल्दी से ठीक कर दीजिए। डॉक्टर मेरी तरफ़ मुड़कर देखने लगी उनकी बड़ी-बड़ी आखों से मुझे ऐसा महसूस हुआ कि वह मेरी बातों से नाराज हैं। लेकिन कुछ क्षणों के बाद मेरे माथे पर हाथ रखकर सहज मुद्रा में कहने लगीं, बेटी तुम चिन्ता मत करो इनका इलाज शुरू हो गया है वे दो-तीन दिन में ठीक होकर वापस घर चले जायेंगे। तुम अभी घर जाकर आराम कर सकती हो लेकिन मैंने उनसे असीत के पास ही रहने के लिये अनुरोध किया। डॉक्टर साहब ने कहा कि तुम इधर रह सकती हो एक शर्त पर जो कि तुम्हें रोना नहीं होगा जिससे मरीज की हिम्मत कम न हो जाय। तुमको ऐसे ही रहना पड़ेगा जैसे की तुम्हारे सहारे तुम्हारे पति की हिम्मत बढ़े और वे जल्दी स्वस्थ हो जाय। मैंने डॉक्टर की बात सुनने के बाद अपने को सम्भाल लिया। मेरे अन्दर एक नयी शक्ति जाग्रत हुई।

उस समय पर विपिन जी हर दिन स्कूटर से अस्पताल से घर तक लाते थे और वहाँ छोड़ने जाते थे क्योंकि अस्पताल में नहाने की कोई सुविधा नहीं थी। दिन पर दिन उनके साथ मेरा सम्पर्क गहरा हो गया था ऐसा लगता था कि मेरे दिल में उनके प्रति एक छोटी सी जगह बन गई थी। अस्पताल में मुझे उनके बारे में ख्याल आ जाता था और ऐसा लगता था कि वो कब आये और मेरे साथ बात करें। कभी-कभी मैं अपने दिल को बहलाती थी और अपने मन ही मन में प्रश्न करती थी कि मेरा उनके प्रति इतना लगाव क्यों है वे तो मेरे कुछ भी नहीं लगते हैं। कभी-कभी मैं अपने को काबू में करने की चेष्टा करती थी कि उनके प्रति मेरा भाव सुधर जाये। चार-पाँच दिन बीत जाने के बाद असीत की तबीयत ठीक हो गई थी डॉक्टर ने उनको घर जाने की इज़ाज़त दे दी थी। हम लोग विपिन जी के साथ घर वापस आ गये थे। डॉक्टर ने असीत को आराम करने की सलाह दी थी इसलिये वे दफ्तर न जाकर घर पर ही रहते थे। इसी अवसर पर विपिन जी का हमारे घर आना जाना हो गया था; उनकी उपस्थिति मुझे हर्षित करती थी जैसे कि वे मेरे जीवन का एक हिस्सा हो। वे भी घर के बाहर के काम में हाथ बटाने लगे थे; उनके साथ मेरी दोस्ती भी गहरी हो गई थी। ये दोस्ती का सिलसिला देखकर असीत ने मेरी दोस्ती पर कभी भी पाबन्दी नहीं लगाई थी बल्कि विपिन जी के साथ मुझे बाजार जाने के लिये प्रेरित करते थे। लेकिन मुझे सन्तोष तो होता था परन्तु मन में ख्याल आता था कि लोग क्या कहेंगे? मन में भय आता था कि नीलिमा क्या सोचेगी? जो विपिन जी की बीवी है? और हमारे बारे में क्या सोचेगी? अचानक मेरी तबीयत गड़बड़ होने के कारण जब वे मुझे दवा लेने के लिये बोले थे और उस समय मेरा इतना ख्याल रखते थे जिससे मेरे मन में उनके प्रति और भी श्रद्धा बढ़ गई थी और मेरी दोस्ती ने एक नया मोड़ ले लिया था। ऐसे करके उनके साथ असीत की तबियत ठीक होने के बाद भी उनका हमारे घर आना जाना वैसे ही बरकरार था। कभी-कभी वे असीत की गैरहाजिरी में भी हमारे घर आते थे और घन्टों तक बातचीत करते थे और अपने मन की बात खुलकर करते थे। ऐसी बात करने के समय जब सुनीता जी आ जाती थी, तो वे बातचीत को तुरन्त विराम देते थे और उठकर चले जाते थे जैसे कि वे उनके जानी दुश्मन हों। सुनीता जी ने भी जब उनको हमारे घर पर पहली बार देखा था तो वह कुछ नहीं बोली थीं लेकिन उनके चेहरे से ऐसा लगा था कि वह मुझ से नाखुश हैं। एक दो बार अकेले में मुझे उनके साथ बात करते हुए देख कर उन्होंने मुझे एक घटना के माध्यम से बताया था कि किसी स्त्री का किसी दूसरे पुरूष के साथ अकेले में बातचीत करना उचित नहीं होता है। मुझे लगा था कि वह पुराने ख्यालों की है इसीलिए ऐसे बात कर रही है।

ऐसे ही कुछ दिन बीत गये थे। हमारा विपिन जी के साथ मिलना-जुलना बढ़ गया था। एकदिन मैं और विपिन जब शाम को चाय पी रहे थे, उसी समय घर की घन्टी बजी मैंने जाकर दरवाजा खोला तो देखा सुनीता देवी बाहर खड़ी हैं जैसे कुछ जरुरी बात

करना है ऐसा कहकर वो वापस अपने घर चली गई थीं। मुझे लगा कि वो मुझसे नाराज होकर चली गईं। उनके चेहरे पर चिन्ता के भाव प्रकट हो रहे थे और मैं सोचने लगी कि वो किस मुद्दे पर बात करना चाहती हैं उनका गम्भीर चेहरा बार-बार मेरे सामने आने लगा था, ऐसा प्रतीत होता था जैसे कि उनकी दो आँखे क्रोध से जल रही हो और मुझे जलाकर राख कर देगीं। इतने दिनों के मिलने के दरमियान मैंने उनका ऐसा चेहरा कभी भी नहीं देखा था। मन में ऐसा विचार आता था कि मैं अभी उनके पास जाकर पूछू कि वह क्या जरूरी बातचीत करना चाहती हैं? लेकिन मैं अपनी भावना को सम्भालने की कोशिश कर रही थी और अपने आप प्रश्न कर रही थी कि इतना उतावला होने की क्या जरुरत है? इस विषय में उस रात मुझे सही से नींद नहीं आयी और मैं रात भर करवट बदलती रही। उनके उदास चेहरे पर जलते हुए दो पुतले दिखाई पड़ रहे थे। ऐसे ही रात बीत गयी और सुबह हो गयी तो मैंने देखा की सूर्य की किरण हमारे आंगन में खिल रही थी। मेरे मन में एक नये भाव का संचार हुआ और मैं बिस्तर छोड़ने के बाद अपने घरेलू कामों में व्यस्त रही। और मन में कभी-कभी ख्याल आ रहा था कि ज्यों ही ज्यों ही असीत जल्दी से ऑफिस जाये और मैं सुनीताजी के घर जाकर मिलूँ। ये एक-एक पल मुझे एक-एक साल जैसा लग रहा था और मैं असीत को ऑफिस भेजने की तैयारी में व्यस्त रही।

असीत के ऑफिस जाने के बाद मैं सुनीता जी के घर तुरंत उत्कंठा के साथ चली कि वह मुझसे क्या जरूरी बात करना चाहती है? जब सुनीता जी के घर पहुँची तो वह मुझे देखकर प्रसन्न हुई और अपने बेडरूम में बुला लिया। इसके बाद उसने अपने बेडरूम का दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया। मुझे अजीब सा लगा। इसके बाद उन्होंने खिड़की को भी बन्द कर लिया। मुझे शंका हुई कि इनके मन में क्या चल रहा था और मुझे समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या कहने वाली है? उन्होंने मुझे अपने पलंग पर बिठाया और कहने लगी कि 'सीमा तुम्हें एक बात बताने के लिए बहुत दिन से सोच रही थी लेकिन कहने के लिए संकोच कर रही थी' मुझे उनके चेहरे पर भारीपन का आभास हो रहा था जैसे की उनके दिल पर बड़ा सा बोझ है। वह लम्बी सांस लेकर बोलने लगी-अभी मैं अपने जीवन की कुछ घटनाएं तुम्हें बताने वाली हूँ। मेरे बारे में गलत मत समझना-'उस समय मेरे शरीर में जवानी का जोश था मैं अच्छा-बुरा कुछ समझ नहीं पाती थी। मुझे लड़कों के साथ मिलना-जुलना अच्छा लगता था राजेश जी के साथ मेरी शादी हो गयी थी लेकिन मुझे दूसरे लोगों के साथ संपर्क रखना अच्छा लगता था ऐसे ही एक दिनेश जी जो मेरे बहुत करीब आ गये थे उनको मैंने अपने दिल में बिठा लिया था वह हमारे घर भी आते-जाते थे, उसके साथ मेरी अच्छी खासी दोस्ती हो गयी थी लेकिन राजेश जी को ये सब पसंद नहीं था। उन्होंने मुझे कई बार समझाया था कि दिनेश जी के साथ मिलना-जुलना बन्द करें लेकिन मैंने उनकी बात नहीं मानी और दिनेश जी के साथ मेरा मिलना-जुलना जारी रहा। एक दिन की बात है राजेश जी उस समय घर पर नहीं थे और मेरी तबियत भी सही नहीं थी। मैं बेडरूम में आराम कर रही थी जब मैंने करवट बदली तो मैंने देखा कि दिनेश जी मेरे बेड पर बैठे थे और वह मुझे देखकर मेरे और करीब आ गए और मुझे अपनी बाँहों में लेकर कहने लगे तुम्हें क्या हो गया है। इतना उखड़ी-उखड़ी क्यों दिख रही हो। और मेरे चेहरे पर अपने हाथ घुमाये और बोले तुम्हारा इतना उदास चेहरा मुझे पसंद नहीं है। तुम जल्दी ही ठीक हो जाओ मैं तुम्हारा सिर दबा देता हूँ। अचानक बेडरूम के दरवाजे से खट-खट की आवाज आयी तो मेरा जी घबराने लगा और मैंने बेडरूम का दरवाजा खोलने के बाद देखा कि राजेश जी खड़े थे और वे अन्दर घुस आये और दिनेश जी को देखने के बाद बड़ी-बड़ी आँख फाड़कर बोले इधर क्या चल रहा है? ये शरीफ लोगों का घर है ऐसा कहकर वे बहुत गुस्सा हुए और मुझे धक्का देकर घर से निकल गए, उसके बाद दिनेश जी घबरा कर मुझे अकेला छोड़कर चले गये। मैंने राजेश जी को बहुत ढूँढ़ा लेकिन वे कहीं भी दिखाई नहीं दिये, उस दिन मैं राजेश को रातभर पूरे शहर का कोना-कोना ढूँढती रही लेकिन उनका कुछ भी अता-पता नहीं मिला। दिमाग को बहुत दौड़ाया कि वे कहाँ हो सकते है? उनके बहुत से दोस्तों से उनके बारे में पूछा लेकिन उनका कहीं भी नामो-निशान नहीं मिला, उस दिन मैं रात भर नहीं सोयी थी और चिंता में डूब गयी थी कि कैसे राजेश को ढूँढा जाये मन में अजीब सी कल्पना आ रही थी कि ऐसा तो नहीं कि उन्होंने कुछ गलत कदम उठा लिए हों। कभी-कभी ख्याल आता था कि राजेश को ढूँढने के लिए पुलिस का सहारा लूँ लेकिन बिना पैसा लिए पुलिस कुछ काम नहीं करती है और मैं अकेले भी थी इसलिए उस रात को पुलिस स्टेशन जाना मेरे लिए उचित नहीं था। ऐसा सोच कर मैंने कुछ कदम नहीं उठाया। अचानक मेरे मन में ख्याल आया कि राजेश जी जरूर नदी के किनारे शिव-मंदिर के पास गए होंगे। जब रात ढल गई, मैं अकेले नदी के किनारे शिव-मंदिर गई और दूर से देखा कि एक आदमी मंदिर के सामने पड़ा है और उसके पास खून जैसा लाल दिखाई दे रहा था। ये देखकर मेरा जी घबराने लगा और मन में बहुत सारे खराब विचार आने लगे और मैं घबराई हुई उसके पास

दौड़ती हुई गई और पहुँचने के बाद देखा कि उस आदमी का चेहरा नीचे की तरफ है।लेकिन मैं समझ गई कि ये राजेश है और उन्हें स्पर्श करने के बाद मुझे यकीन हो गया कि यही राजेश जी हैं। लेकिन वह मेरे स्पर्श के बावजूद भी नहीं जागे और मैंने उनको थोड़ा हिलाया लेकिन इसके बाद भी वे नहीं उठे। मुझे लगा कि वे बेहोश अवस्था में हैं। उनके शरीर से बहुत खून बहने के कारण मेरे दिमाग में नहीं आया कि क्या करूँ और क्या न करूँ उनको मैं अकेले कैसे अस्पताल ले जाऊँ। मन में आया कि घर वापस जाकर किसी को बुला ले आऊँ। अचानक मन में आया कि उनके चेहरे पर पानी के कुछ छींटे मारूँ। मंदिर बंद होने के कारण उधर से पानी नहीं मिल पाया इसलिए मैंने सोचा कि नदी से पानी ले आऊँ लेकिन मेरे पास पानी लाने के लिए कोई बरतन नहीं था। लेकिन मैं नदी की तरफ दौड़ते हुए गई और भगवान से प्रार्थना कर रही थी कि राजेश जी कैसे भी ठीक हो जायें। मैं नदी के किनारे पहुँचने के बाद अपने आँचल को गीला करके दौड़कर वापस राजेश के पास आई और राजेश के चेहरे पर छींटे मारे और उसी समय पर मंदिर के पुजारी आ गए और बोलने लगे कि-'इधर क्या हो रहा है? ये आदमी इधर क्यों पड़ा है? ' मैं रोने लगी कि बाबा जी इनको बचा लीजिए। जब उन्होंने राजेश को देखा तो बोले अरे ये तो राजेश जी हैं। इनको क्या हो गया है? मैं कुछ बताने की कोशिश कर रही थी कि वे कहने लगे कि इनका तो बहुत खून बह गया है। इनको अभी अस्पताल ले जाना पड़ेगा। मैं कुछ इन्तजाम करने के लिए जा रहा हूँ। तुम इनका ख्याल रखना और पानी छिड़कते रहना। हम दोनों मिल कर राजेश जी को अस्पताल ले गए और इलाज कराया, दो दिनों तक इलाज होने के बाद वे मेरे साथ घर वापस आ गये। लेकिन उन्होंने मेरे साथ बोलना बन्द कर दिया था। वे अभी तक भी मुझसे सही ढ़ंग से बात नहीं करते और मैं उनके सामने एक मशीन जैसी रहती हूँ। मैं अभी भी अपने मन की भावना को उनके सामने प्रकट नहीं कर पाती हूँ। हम दोनों एक घर में रहने के बाद भी अलग-अलग जीते हैं। उस समय वे चाहते तो मुझे घर से निकाल सकते थे लेकिन वे मेरे साथ इस घर में इतने साल बिता चुके हैं जैसे कि मैं एक वस्तु हूँ। इतने सालों में मैंने उनके चेहरे पर आनंद की झलक नहीं देखी है हम दोनों घुट-घुट कर जिन्दगी बिता रहे हैं। ऐसे जीने से तो मर जाना बेहतर है। ऐसे कहते-कहते सुनीता जी की आँखों में आँसू बहरहे थे। उन्होंने मुझे अचानक गले से लगा लिया और रोते-रोते कहने लगी कि मैं चाहती हूँ कि तुम्हारे और असीत के बीच में इस तरह की कोई दरार न पड़े। सुनीताजी की बातों को सुनकर मुझे महसूस होने लगा कि आजकल असीत की मेरी तरफ उदासी है। जैसे कि वे विपिन जी के साथ मेरा बढ़ता हुआ संपर्क देखकर वे अन्दर ही अन्दर परेशान रहते हैं। इस सिलसिले में उन्होंने मुझसे कोई बात नहीं की लेकिन मुझे महसूस हुआ कि उनकी इस उदासीनता के लिए मैं दोषी हूँ। मैंने असीत के प्रति नाइंसाफी की है। मेरा कर्तव्य है कि मैं उनकी देखभाल करूँ। ऐसा सोचकर मेरी अंतरात्मा रोने लगी और मन में विचार आया कि मैं अभी असीत के पास जाऊँ और उनके पैर पकड़कर क्षमा याचना करके कहूँ मैंने एक बड़ी गलती की है और उसके लिये पश्चाताप कर रही हूँ। मैं अपने जीवन में इस तरह की गलती कभी नहीं करूँगी और इस बार मुझे माफ कर दीजिए। सुनीताजी ने मेरे मन की भावना को समझ लिया और कहने लगीं कि मेरा यह प्रयास सफल हुआ क्योंकि मेरी ये बात तुम्हारी समझ में आ गई और मैं अपने को संभाल नहीं पाई और रोने लगी। वे भी मेरे साथ रोने लगी। मन में ठान लिया कि मैं विपिनजी के साथ बिल्कुल भी बात नहीं करूँगी। असीत ही मेरा सब कुछ है वे मेरे जीवन साथी हैं। मैं उनकी सेवा में अपना जीवन बिता दूँगी। ऐसा सोचकर मैं अपने घर आकर रसोई में काम करने लगी लेकिन मेरे मन को शान्ति नहीं मिल रही थी और मेरा काम बहुत गड़बड़ हो रहा था।

असीत के घर आने के लिए मैं बेचैनी से इंतजार कर रही थी तब घंटी की आवाज आई तो मैं दरवाजे की तरफ दौड़ने लगी और दरवाजा खोलने के बाद देखा कि असीत मेरे सामने खड़े हैं। उनको देखती रही, मेरी आँखों में आँसू बहने का आभास हो रहा था। उस समय असीत मेरे पास आए और हाथ पकड़कर बोले कि क्या देख रही हो जैसे कि मुझे कभी देखा नहीं है। बहुत जोर से भूख लग रही है कुछ तो खाना दो। मैं उनके ये शब्द सुनकर अपनी सोच से बाहर निकली और कहने लगी कि मैं नीलगगन में चाँद का टुकड़ा देख रही हूँ। उस समय नारियल के पेड़ के पत्तों के पीछे से चाँद का टुकड़ा मेरे ऊपर हँस रहा था।

प्रो.डी.पी.मिश्रा

खुद को पाओगे तुम ना अकेला कभी
दोस्ती का वो मज़ा किताबों में है

वक्त के साथ चलना अगर सीख लो
पाना मुश्किल नहीं, जो निगाहों में है

जावेद अहमद
छात्र

क्या भ्रष्टाचार ही सब समस्याओं की वजह है?

आजकल चारो तरफ-खासकर मीडिया और पढ़े लिखे तबके में, जिसे की सिविल सोसाइटी कहा जा रहा है-एक ही चिन्तन नजर आ रहा है और वो है भ्रष्टाचार। पिछले कुछ महीनों के धरना प्रदर्शनों व आन्दोलनों से बेशक एक अलग माहौल हमारे देश में पैदा किया गया है जो असल में किसी अंगडाई का संकेत दे रहा है लेकिन इस सबमें आम आदमी जिसके लिए यह सब किया जा रहा है नदारद हैं। यानि जिसके लिए यह सब प्रपंच रचा जा रहा है उसे सही बात की जानकारी ही नहीं और हो भी कैसे? जिस देश में साक्षरता 74% प्रतिशत हो वहाँ सही जानकारी निचले तबके तक पहुँचे भी तो किस तरह। बाकी बचे हुए साक्षर भी अखबारों और सस्ते साहित्यों के मार्फत अधकचरी जानकारी रखते हैं और उसी के मुताबिक अपना कदम उठाते हैं। गाँधी जी ने कहा है 'इसमें कोई शक नहीं कि आम स्कूलों में जो पुस्तकें बच्चों के लिए इस्तेमाल की जाती है वे हानिकारक नहीं होती हैं तो अधिकांश निकम्मी जरूर होती है। लिहाजा पुस्तकों की जरूरत विद्यार्थियों की अपेक्षा अध्यापकों को ज्यादा है।

[1] ठीक यही बात यहाँ के तथाकथित समाज सुधारकों पर भी लागू होती है। हकीकत को पूरी तरह समझे बगैर जो भी फैसला लिया जाता है वो सही कैसे हो सकता है? भ्रष्टाचार या काला धन जैसे दोनों ही मामले ऐसे है जो असल मसले से हमें गुमराह करते हैं। यानि हमसे पेड़ की जड़ की बजाय पत्तियों पर सिंचाई करने का आह्वान किया जा रहा है। इस तरीके के आन्दोलनों की परिणति भी निश्चित होती है यानि जन समर्थन के अभाव में असफल हो जाते हैं जो थोड़ी बहुत उम्मीद की किरण दिखाई देती है वो फिर से पृष्ठ-भूमि में चली जाती है। यानि जब तक सही बीमारी का पता नहीं चलता सही इलाज मुमकिन नहीं । प्रसिद्ध वकील प्रशान्त भूषण ने एक साक्षात्कार में कहा है कि जनलोकपाल बन भी गया तो यह भ्रष्टाचार का समाधान नहीं है, क्योंकि यह भ्रष्टाचार के केवल माँग पक्ष पर केन्द्रित है। उनके अनुसार भ्रष्टाचार के मूल कारक कारपोरेट पूँजीपति घराने और उनके पक्ष में बनाई जा रही नवउदारवाद व भूमण्डलीकरण की नीतियाँ हैं। यही कारण है कि पढ़े-लिखे और खाते-पीते शहरी मध्यम वर्ग के लिए भ्रष्टाचार अहम मुद्दा है। यही मध्यम वर्ग कारों और बाइकों पर सवार होकर फिल्मी गानों को बजाकर अनशन का विजय जश्न मनाता है। और मीडिया इसे आजादी की लड़ाई की संज्ञा देती है। और वे इसके सिवा दिखा भी क्या सकते हैं क्योंकि उनकी टी आर पी गाँव में रहने वाले 73 प्रतिशत लोग नहीं

बल्कि यही मध्यम वर्ग तय करता है और ये वो ही आइटम परोसते हैं जो बिकता है और यह मध्यम वर्ग खरीदता है। इन आंदोलनों के पोस्टर बैनरों पर गाँधी जी, शहीद भगत सिंह व भारत माता की तस्वीरें होती हैं जिनके नारों में 'इन्कलाब जिन्दाबाद ' का नारा भी जरूर लगता है, लेकिन ये नारा लगाने वाले समझौता क्यों कर लेते हैं, समझ का फर्क है। जब भगत सिंह से निचली अदालत में 'इन्कलाब' का मतलब पूछा गया तब उन्होनें कहा 'इन्कलाब' के लिए खूनी संघर्ष की जरूरत नहीं है। "इन्कलाब' से हमारा अभिप्राय यह है कि वर्तमान व्यवस्था जो खुले तौर पर अन्याय पर टिकी है, बदलनी चाहिए।"

[2] यानि इसका मतलब प्रगति के लिए परिवर्तन की भावना व आकांक्षा है और यह आवश्यक है कि पुरानी व्यवस्था बदलती रहे। अब तक का पूरा इतिहास गवाह है कि अब तक ईजाद हुई कोई भी व्यवस्था कायम नहीं रह पाई है। इससे यह भी साबित होता है कि पूर्व की सबकी सब व्यवस्थाओं में कमियाँ थीं जिन्हें भौतिक अवस्थाओं व सामाजिक जरूरतों के मुताबिक बदलते रहना पड़ा है। वर्तमान व्यवस्था ज्यादा पुरानी नहीं है, फिर भी इसने समाज में इतनी असमानताएं, विषमताएं पैदा कर दी हैं कि समाज का हर वर्ग सोचने को मजबूर है कि इसका विकल्प तलाशना चाहिए ताकि उत्पादन के साधन तथा उत्पादन के ऊपर दस फीसदी जनसंख्या के अधिकार व नियंत्रण को सौ फीसदी समाज को मुहैया करवाया जा सके। यह इतना मुश्किल नहीं है लेकिन गुमराही व गलत प्रचार के सहारे तथा उचित जानकारी की कमी से हकीकत धुँधलायी हुई है। संतोष की बात तो यह है कि यह धुंधलाहट ज्यादा अरसे तक कायम नहीं रह सकती। देश के अन्दर करोड़ो बेरोजगारों की फौज जिसमें अधिकतर उच्चशिक्षा प्राप्त हैं भौतिक दशाओं के कारण हकीकत जानने को बेकरार हैं। क्योंकि नौकरियाँ व रोजगार के मौजूदा वसीले पहले से ही कमी का

शिकार हैं व तरीके तरीके की कटौतियाँ कर कर के किसी तरह से अपना वजूद बचाने की कोशिश कर रही है। तरह-तरह के समाजसुधारक कभी लोकपाल बिल या काला धन या पारदर्शिता का झुनझुना थमा कर देश की अभावग्रस्त आम जनता को हकीकत से दूर करती आई हैं। इन धरने अनशनों के ऐवज में सरकारें, बेरोजगारी, बिजली और पानी की बदहाल स्थिति, दिनों-दिन आसमान छूती कीमतों, बढ़ते अपराधों, सड़क हादसों में हो रही लगातार बढ़ोत्तरी, दमघोंटू प्रदूषण, घटता जल स्तर, सड़कों पर लगते लम्बे-लम्बे जाम तथा आत्महत्या करते किसान आदि मसले अपने एजेन्डे से कुछ वक्त तक हटा लेती हैं क्योंकि उसे पता चल जाता है कि आम जनता अभी कहीं और भटकी हुई है। और विचारधारा असंख्य छोटे-छोटे हिस्सों में बँटकर आपस में टकरा रही हैं।

स्पष्ट है कि सिविल सोसाइटी में 'सिविल' उतना ही है जितना 'जनतंत्र ' में 'जन'।

यह एक बड़ा सवाल है कि जिसे हर नौजवान, छात्र तथा बुद्धिजीवी को समझना ही होगा ताकि नस्लों को और गुमराह होने से बचाया जा सके। वैश्वीकरण के प्रभावों के कारण सूचनाओं के सुगम संचरण की वजह से उम्मीद की जा सकती है कि आने वाला वक्त बेहतर जिन्दगी ला सकता है क्योंकि सही जानकारी व सच्चाई के आधार पर ही मंजिल हासिल की जा सकती है। यानि भ्रष्टाचार हो या दीगर दूसरे मसलों का हल, आवश्यकता के अर्थशास्त्र में निहित है न कि मौजूदा मुनाफे के अर्थशास्त्र में।

सन्दर्भ

(1) गाँधी 'मेरे सपनों का भारत '

(2) मॉर्डन रिव्यू' के सम्पादक को लिखे गये भगतसिंह के पत्र से.

चन्द्र शेखर गोस्वामी
कनि. तक. अधीक्षक
यांत्रिक अभियांत्रिकी

वेद-वाक्य

न दुरुक्ताय स्पृहयेत्।

हमें कभी दुर्वचन नहीं बोलना चाहिए। (ऋग्वेद 1.41.9)

दैव्याय कर्मणे शुन्धध्वं।

श्रेष्ठ कर्मों के सम्पादन के लिए अपने जीवन को शुद्ध, पवित्र और निर्मल बनाओ। (यजुर्वेद:1.13)

कुछ तेरी बातों का जादू

कुछ ये पल-पल का इंतजार..
और...
कुछ मेरे दिल की तन्हाई।।

कुछ ये रातों का ढ़लना,
कुछ सांसो का मचलना,
कुछ ये पल-पल बढ़ता खुमार...
और.....
कुछ ये वक्त की रुसवाई।।

कुछ तेरे करने का इंतज़ार,
कुछ तेरी बातों का करार,
कुछ तेरा मुस्कुराते हुए नज़रें झुकाना..
और .....
कुछ तेरे इंतज़ार में मेरा पल-पल मिट जाना।।

कुछ ऐसे ही गुज़ारी हमने ये तन्हा शाम
लेकर बस तेरा नाम.....

ना मैं चला ना तुम
बस चल रहा था ये समाँ जैसे।
ना होंठो पे थे कोई अल्फाज़
ना कोई बात,
बोल रहा था ये समाँ जैसे।।

ना आँखों में तारे ना हाथ में चाँद
मिट गयी थीं लकीरें जैसे।
बस तुझमें दिखती थी दुनिया
तुझसे हर अरमान,
बिछड़ गये थे कारवाँ जैसे।।

क्यूँ छूट गये रिश्ते
और बस जुड़े रह गये हाथ.....
पल भर की थी खुशी पल भर का गम
हर आरजू खो गयी हो जैसे
तू ही था दरिया
तू ही किनारा,
हर सजदा खाली गया हो जैसे।।

क्यूं छूट गये रिश्ते
और बस जुड़े रह गये हाथ.....

प्रतीक सिंह लोधी
छात्र

जेंटल मैन

मेरा एक मित्र बाहर जा रहा था,
डॉलर उसे खूब ललचा रहा था।
देश के एक उच्चतम संस्थान से,
उसने तकनीकों को सीखा,
और वहीं रहते -रहते बनवाया,
पासपोर्ट और वीसा।
मैंने उसे समझाया।
इस देश ने तुझे बनाया,
तू तो जा रहा है,
माँ-पिता को
किसके सहारे छोड़े जा रहा है ?
'अरे थोड़े कम पैसे में ही सही,
यहाँ भी गुजर हो जाएगी।
और तेरे रुक जाने से देश की हालत,
थोड़ा और संभल पायेगी' ?
किन्तु मित्र तो बस जिद पर अड़ा था।
जाने को तैयार खड़ा था।
बोला वहाँ आधुनिकता है, सुविधा है,
और सब कुछ बड़ा ही व्यवस्थित है।
वहाँ की तकनीक करती चमत्कृत है,
देखना वहाँ मैं खूब डॉलर कमाऊँगा।
और जल्दी ही जेंटलमैन बन जाऊँगा,
मित्र ऊपर से उत्साहित हो रहा था।
पर उसका अंतर्मन कहीं सो रहा था।
बोला यहाँ क्या है ?
बेकारी, गरीबी और अशिक्षा।
जगह-जगह लोग माँग रहे भिक्षा।
बुनियादी सुविधाओं का अभाव।
पैसा दे देकर अपना काम कराओ।
अरे यहाँ सुधार नहीं होने वाला
यही चलेगा वर्ष दर वर्ष।
और यहां रुकना तो है,
एक बहुत बड़ा संघर्ष।
मुझे बड़ा दुख था कि,
मित्र को समझा न पाया।
बुझे मन से उसे,
हवाई अड्डे तक भेज आया।
शुरू के कुछ वर्षों तक,
उसकी ढेरों ई-मेल आयीं।
उत्साह से उसने वहाँ की,
सारी बात बताई।
धीरे-धीरे वह वहाँ रम गया,
मैं भी अपने संघर्ष में जम गया।
कई वर्षों के उपरांत,
मित्र का लंबा सा पत्र आया।
पूरे पत्र में मैंने उसका,
व्यथा वृतान्त ही पाया।
लिखा था डॉलर तो खूब कमाया,
लेकिन सुकून बिलकुल नहीं पाया।
पत्नी दीपक न जला पाने से निराश रहती है।
क्योंकि धुँआ होते ही,
फायर घंटी बज उठती है।
हमारे आराध्य देवताओं का,
जब चप्पल पर अंकन होता है।
तो अंतर्मन खून के आँसू रोता है।
जब बच्चे दीवाली से ज्यादा,
नव-वर्ष पर उत्साहित रहते हैं।
तो मन के आंसू झर-झर बहते हैं।
मित्र त्यौहार तो सभी मनाता हूँ,
मिठाई भी खाता हूँ,
लेकिन लड्डू गमगीन लगते हैं,
मोदक आत्मविहीन लगते हैं।
कहने को तो होली, दीवाली सब कुछ मनाता हूँ,
किन्तु मन को अति व्यवस्थाओं,
में जकड़ा हुआ पाता हूँ।
अपने देश में तो,
जैंटलमैन कहलाता हूँ,
लेकिन यहाँ के नजरिये में,
अपने को आदिवासी ही पाता हूँ।
गणपति की वो धूम,
नवरात्र के मेले,
दूर से चलकर आती,
अजान की वो आवाज,
सब कुछ मन को तरसाता है,

और बचपन में तेरे साथ,
जगन्नाथ यात्रा में,
पैदल चलकर जाना,
बहुत याद आता है।
अपनी मातृभाषा बोले सुने,
एक अरसा हो गया है।
माता-पिता के लिए,
कुछ न कर पाने के मलाल से,
मन दुखी और,
थकित सा हो गया है।
और हास्य रस तो,
न जाने कहाँ खो गया है।
आज अंतर की भाषा में,
ये पत्र लिख रहा हूँ।
सारे गम तुझे कह रहा हूँ।
यहाँ के तिरस्कार युक्त डॉलर से,
अपना रुपया कहीं बेहतर है,
घर की गरीबी, अशिक्षा एवं,
अव्यवस्था को सुधारने के लिए,
संघर्ष कर जाना कहीं बेहतर है।
बहुत हुआ अब, मिथ्या ऐश्वर्य को,
मैं अंतिम प्रणाम करना चाहता हूँ।
संघर्षों की बली वेदी पर शहीद हुए,
सत्येन्द्र दुबे जैसे सपूतों को,
सलाम करना चाहता हूँ।

सोमनाथ डनायक
कनि. तक. अधीक्षक
एमएसपी

विदुर-नीति

✸जो मनुष्य किसी प्रकार का संबंध नहीं रखते हुए भी मित्रभाव से व्यवहार करता है, वही मित्र है।

✸जो बिना कारण क्रुद्ध हो जाते हैं तथा बिना कारण प्रसन्न होते हैं, ऐसा स्वभाव दुर्जनों का होता है। जैसे जलहीन बादल सर्वत्र घूमता है लेकिन उसका उपयोग कहीं नहीं होता है, उसी प्रकार ऐसे व्यक्ति के क्रोध और प्रसन्नता का कोई मूल्य नहीं होता है।

मेरी विदेश-यात्रा

मैने आई. आई. टी कानपुर में 1972 में स्नातकोत्तर पढ़ाई के लिए प्रवेश लिया था और तब से अब तक मेरा इस संस्थान से एक अटूट रिश्ता रहा है यद्यपि 1980 से 1987 तक मैं इस परिसर में नहीं था पर मानसिक रूप से मैं सदैव इस संस्थान से जुड़ा रहा हूँ और जैसे ही मुझे यहाँ वापस लौटने का पहला अवसर मिला मैं तुरंत वापस आ गया । 1987 में हम लोग बैंकाक में थे, सब कुछ भली-भाँति चल रहा था पर स्वदेश लौटने की इच्छा सदा मन में कहीं दबी थी । इस कारण लौटने का निर्णय बहुत आसानी से हो गया। फिर 20 वर्षों का समय मानो पता ही नही चला । बच्चे बड़े होकर घर से दूर हो गए और हम बस पति-पत्नी घर में रह गए । वर्ष 2008 में हमें दो वर्ष के लिए दक्षिण अफ्रीका के डरबन शहर जाने का मौका मिला । जीवन में नई जगह देखने और नया काम सीखने की इच्छा और कुछ बदलाव की खोज में हमने वहां जाने का निर्णय ले लिया ।

दक्षिण अफ्रीका की सुन्दर सड़कें, व्यवस्थित यातायात तथा अन्य व्यवस्थाएं देखकर हम आश्चर्यचकित रह गये, ऐसा लगा ही नहीं कि हम अफ्रीका के किसी देश में आयें हैं। हमने डरबन का अपना प्रवास एक सुन्दर से गेस्ट हाउस से शुरू किया । जाते ही वहाँ बहुत सारे निर्देश मिले कि सुरक्षा का हर समय ध्यान रखें । बाहर निकल कर पैदल घूमने का साहस कदापि न करें । रात में कार से भी सावधानी से जाएँ और कहीं रुक कर रास्ता भी न पूछें । हम लोग इतने निर्देश सुनने के बाद उस दिन तो कहीं गए ही नहीं । विश्वास नहीं हो रहा था कि इतनी सुन्दर जगह पर दर्दनाक घटनाएँ कैसे हो सकती हैं । पर सबकी सलाह मानने में ही भलाई लगी । अगले दिन मुझे ऑफिस ले जाया गया और एक कार मिल गयी । शाम को गेस्ट हाउस ढूँढने में काफी भटका । उसी दिन एक भारतीय साथी से भेंट हुई और उन्होंने आसपास की कुछ जगह दिखा दी, जिससे हम लोग भोजन की व्यवस्था कर सकें । 3-4 दिन तक तो हम लोग कार से एक सड़क पर 3-4 किलोमीटर जाते थे और फिर वापस मुड़ कर गेस्ट हाउस आ जाते थे जिससे आस पास का कुछ ज्ञान बढ़े और रास्ता भी न भटकें। लगभग 10 दिन में हमने रहने लायक एक घर ढूंढ लिया और अपनी कार भी खरीद ली और कुछ डर भी कम हुआ ।

डरबन शहर हिंद महासागर के किनारे बसा हुआ एक सुन्दर शहर है । शहर पहाड़ियों से घिरा हुआ है और प्राकृतिक छटा अद्भुत एवं निराली है । ऐसे में घूमने का भी बहुत मन होता था और डर भी लगता था । फिर वहां कुछ और भारतीय परिवारों से भेंट हुई और कुछ मित्र बनाना शुरु किए । धीरे-धीरे भय कुछ कम होता गया और हम लोग कुछ मित्रों के साथ आसपास जाने लगे । लगभग 3 सप्ताह बाद हमारे एक मित्र कानपुर से हमसे मिलने आने वाले थे

और एक दिन एक मित्र को एयरपोर्ट छोड़ने का अवसर भी ढूँढ लिया जिससे एयरपोर्ट आने-जाने का तरीका समझ लें। उनको डरबन घुमाने का प्रयास डरते-डरते किया। कार भी मैं बिलकुल कानपुर के तरीके से चला रहा था और मुझे कुछ समय लगा वहां के तौर-तरीके सीखने में ।

समय बीतते देर नहीं लगती पर शुरू के कुछ महीने लम्बे से प्रतीत हुए। थोड़े ही समय में 2-3 परिवारों से घनिष्ठता बढ़ गयी और हमारी हिम्मत भी धीरे-धीरे बढ़ गई। अब हम काफी दूर तक अकेले भी जाने लगे थे और आवश्यकता भर के रास्ते भी जान गए थे । लगभग 6 महीने में ही हमारी बेटी और दामाद का डरबन आने का कार्यक्रम बन गया । हम लोगों ने उनके साथ जितनी जगह तब तक ढूंढी थी घूमीं और उनके साथ पूरा आनंद उठाया और उनकी यात्रा हमारे लिए यादगार बन गई । उसके कुछ समय बाद मेरे बेटे और भतीजी ने भी डरबन आने का कार्यक्रम बनाया । हम लोग उनको लेने जोहंसबर्ग गये, जो करीब 630 किलोमीटर दूर है । रास्ता बहुत ही सुन्दर पहाड़ियों से हो कर गुज़रता है और बहुत आनंद आया । वहाँ से हमने एक नेवीगेटर खरीद लिया जिससे हमारे रास्ता भटकने का निदान हो गया और हम बड़े विश्वास के साथ कहीं भी आने-जाने लगे । बाकी का समय हमने बहुत आनंद पूर्वक बिताया और डरबन और आस-पास के सारे स्थान देख लिए । हम लोगों ने केपटाउन भी देखा और वह भी दक्षिण अफ्रीका का एक बहुत सुन्दर हिस्सा है ।

डरबन में लगभग 5 लाख भारतीय मूल के लोग रहते हैं, जो भारत के बाहर भारतीयों की सबसे बड़ी आबादी है । वे लोग हम लोगों से आसानी से घुल-मिल जाते हैं । उनमें से अधिकतर लोग वहाँ ही जन्में हैं पर उनका भारतवर्ष से अटूट सम्बन्ध है और उन्होंने भारतीय संस्कृति, हिन्दू धर्म और सभ्यता को पूरी तरह से सहेज कर रखा है । अधिकांश लोगों को भारत में अपने पूर्वजों का अता-पता भी नहीं मालूम और वे लोग अपनी जड़ें ढूँढने का निरंतर प्रयास करते रहते हैं । सारे तीज-त्यौहार वे लोग पूरे उत्साह से मनाते हैं और संगीत तथा नृत्य की शिक्षा के लिए अपने बच्चों को भारतवर्ष भेजते हैं । उनकी भाषा और उच्चारण थोड़ा हमसे अलग है और हमारी बोली से वे तुरंत पहचान लेते हैं कि हम भारतवर्ष से हैं । क्रिकेट से उनका विशेष लगाव है और वहां आयोजित हुए आई. पी. एल. ने वहां के लोगों के मन में भारतवर्ष की एक नई पहचान बनाई है।

दक्षिण अफ्रीका को 1995 में आजादी मिली थी पर अभी तक वहां रंग-भेद नीति की झलक देखी जा सकती है । अभी भी समाज गोरे, काले और भूरे लोगों में बँटा है लोगों की मानसिकता बदल रही है पर शायद एक दो पीढ़ियों बाद ही यह पूरी तरह से मिट पाएगा। जिस तरह का भेदभाव वहाँ पर देखने को मिला वह हमनें भारतवर्ष में सुना भी नहीं था । गोरे लोगों ने शहर के सभी सुन्दर स्थानों पर कब्जा कर लिया था और वहां पर काले लोग केवल दिन में काम करने जा सकते थे, वह भी अनुमति-पत्र के साथ । उसके कुछ दूर पर भारतीयों के रहने के स्थान थे और उससे भी दूर काले लोगों के रहने के स्थान । काले और भारतीयों के स्कूल, बाज़ार और इलाके अलग थे और वे लोग गोरे लोगों के इलाके में नहीं जा सकते थे । महात्मा गाँधी ने डरबन में 21 वर्ष गुज़ारे । उन्हें वकालत करते थोड़ा ही समय बीता था कि उन्हें पीटरमरित्ज्बुर्ग में चलती ट्रेन से उतार कर अंग्रेजों ने उनके जीवन का उद्देश्य ही बदल दिया । उन्होंने वहां पर हो रहे अत्याचार के विरोध में पहले गुजरातियों को एकत्रित किया जिसे पूरे भारतीय समाज का समर्थन मिला । उन्होंने सबको सत्याग्रह का रास्ता दिखाया, जिसको अपना कर नेल्सन मंडेला तथा अन्य लोगों ने दक्षिण अफ्रीका में भी स्वतंत्रता प्राप्त की । हमारे देश के विभाजन के कटु अनुभवों का लाभ उठाते हुए उन्होंने अपने देश के विभाजन का प्रस्ताव ठुकरा दिया ।

डरबन जाकर हमने आस-पास के कई गेम रिजर्व देखे जिससे पशु-पक्षियों से भी हमारी निकटता बढ़ी । वहाँ के सबसे प्रसिद्ध क्रूगर नेशनल पार्क न देख पाने का थोड़ा-सा मलाल रह गया पर अगली यात्रा में सही । इसी तरह हमने यहाँ पर बहुचर्चित सन सिटी भी नहीं देखा क्योंकि वहाँ पर होटल और कसीनो के अलावा देखने लायक कुछ भी नहीं है । एक और उपलब्धि मेरे लिए यह हुई कि मैंने जो अपने देश परिवार और परिवेश की कमी को बहुत अधिक महसूस किया उससे मेरी भावनाओं का प्रवाह शब्दों में बह निकला। इसके लिए मैं डरबन के अपने दो मित्रों का आभार व्यक्त करना चाहूँगा जिन्होंने मेरी रचनाओं को न केवल पढ़ा बल्कि सराहा भी। फिर तो कई पार्टियों में कविता पाठ करने से मेरी पहचान एक छोटे-मोटे कवि के रूप में हो गयी। बहुत डरते-डरते मैंने एक प्रयास यहाँ लौट कर भी किया और लोगों को आश्चर्यचकित कर दिया कि मैं भी कुछ लिख लेता हूँ । डरबन की अनेक यादें संजोये हम जून 2010 में वापस कानपुर लौट आए । वहाँ लिखी अंतिम कविता की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत कर रहा हूँ;

गिले शिकवे मिट जाएँगे जब हम न होंगे
महफिलें सज़ती रहेंगी कल हम न होंगे
शायद लगे आपको हमारी कमी, कहीं,

हम होंगे सदा मन के आसपास वहीं
फिर मिलेंगे कभी, करके सबसे वादे
हम सब निरंतर बढ़ते रहेंगे आगे,
यात्रायें फिर होंगी, होंगे नये रास्ते ।
पता नहीं क्यों और किस के वास्ते ।।

प्रोफेसर सर्वेश चन्द्रा

कविता

जिन्दगी ये किस मोड़ पे ले आई है,
न माँ-बाप, न बहन यहाँ न कोई भाई है।
हर लड़की का है ब्वायफ्रेंड
हर लड़के ने गर्लफ्रेंड पाई है,
चंद दिनों के हैं ये रिश्ते, फिर वही रुसवायी है।।

घर जाना होम सिकनेस कहलाता है,
पर गर्लफ्रेंड से मिलने को टाइम रोज़ मिल जाता है।
दो दिन से नहीं पूछा माँ की तबीयत का हाल,
गर्लफ्रेंड से पल-पल की खबर पाई है।
जिन्दगी ये किस मोड़ पे ले आई है.....

कभी खुली हवा में घूमते थे,
अब ए.सी. की आदत लगाई है।
धूप हमसे सहन नहीं होती,
हर कोई देता यही दुहाई है।

मेहनत के काम हम नहीं करते
इसलिए जिम जाने की नौबत आई है।
मैकडॉनल, पिज्जा-हट जाने लगे ,
दाल-रोटी तो मुश्किल से खाई है।
जिन्दगी ये किस मोड़ पे ले आई है....

वर्क रिलेशन हमने बढ़ाए,
पर दोस्तों की संख्या घटायी है।
प्रोफेशनल ने की है तरक्की,
सोशल ने मुँह की खाई है।
जिन्दगी ये किस मोड़ पे ले आई है।।

देवव्रत नायक
छात्र

बे-लगाम

अटपट्टू हाज़िर है हुजूर, आपकी सेवा में। मुझे जैसे ही आपके दरबार में आने का हुक्मनामा मिला, मैंने चलने की तैयारी कर ली। अब यूं तो हुजूर मैं कई दिनों से इसकी तैयारी कर रहा था। क्योंकि मुझे मालूम था कि ऐसा होगा ही । पर हुजूर, देर से आने का भी एक कारण है। जब मैं घर से निकल रहा था तो मेरी बीवी ने मुझे समझाया कि हुजूर के सवालों का जवाब अटपटे तरीके से न दियो। सब मामले में सफ़ाई से जवाब दे दियो। दाई से पेट न छुपाया करें। अब हुजूर दाई को ढूँढ़ने में थोड़ी देर लग गई। जब दाई मिली तो वह कहने लगी जच्चा कहाँ है। अब हुजूर नाराज न हो तो कहूँ। न जाने इन दाईयों को जच्चाओं में क्या इन्टरैस्ट है। इन दाईयों की वजह से ही देश की आबादी बढ़ रही है। आबादी का बढ़ना इस समाज के लिए, इस देश के लिए, इस संसार के लिए, ठीक नहीं है हुज़ूर। यह एक समस्या है। इस समस्या से निपटने के लिए हमें कुछ करना पड़ेगा। हमें चाहिए...

क्या कहा हुजूर...यह कोई पब्लिक प्लेटफार्म नहीं है। हुजूर का दरबार है। हाँ हुजूर, माफ कीजिए। पर हुजूर, यह तो टेढ़ी दुम का असर है जो मैं इतना बोल रहा हूँ। न जाने इस देश के, इस संसार के जेनेटिक साइंटिस्ट्स क्या कर रहे हैं। आज तक टेढ़ी दुम और गिरते बालों का इलाज नहीं ढूँढ़ पाएं हैं। इससे पहले कि हुजूर ये क्लोनिंग करे, हमें इनकी क्लीनिंग करनी पड़ेगी। हमें वैज्ञानिकों को, देशवासियों को, सारे संसार के लोगों को दिखाना है कि हम किसी मकसद पर किस तरह जांबाजों की तरह डटे रह सकते हैं। हम चाहेंगे...

नहीं हुजूर मेरा आपकी तौहीन करने का कतई कोई इरादा नहीं है। वो तो बस मैं अपने नाम से लाचार हूँ। अब हुजूर, अगर नाम से किसी की ब्रांड का पता न चल पाए तो ऐसे नाम का क्या फायदा। मैं तो कहूँगा हुजूर ऐसे किसी आदमी को जिसकी बाजू टूटी हुई हो अपना नाम आर्मस्ट्रांग रखने ही नहीं देना चाहिए। हमें इसके लिए फ़रमान जारी कर देने चाहिए।उच्च स्तरीय समितियाँ बनानी चाहिए। सरकारी धारा के तहत हमें एक्ट बना देना चाहिए। इन सबसे भी काम न चले तो हमें बाहरी समर्थन प्राप्त करना चाहिए। लेकिन हर हालत में हमें अपने व्यवहार में नाम की सार्थकता का ध्यान रखना चाहिए।

हुजूर, असल मुद्दे पर आने से पहले बस एक और कारण बताना चाहूँगा अपने देर से आने का। जैसा मैंने कहा हुजूर का आदेश मिलते ही चरणासीन हुआ आपके दरबार की ओर चला आ रहा था। सड़क पर एक काराधीन मानव ने हमें धक्का लगा दिया हुजूर। वो तो हुजूर हम बाल-बाल बच गये। ज़रा सोचिए अगर हमें

कोई ट्रकाधीन मानव धक्का मारता तो क्या होता? हम तो सिर्फ पट्टू रह जाते न उसकी पटकी से। मैं तो कहता हूँ सड़क पर केवल पैदल चलने वालों का ही हक़ होना चाहिए। किसी भी कारधारक अथवा ट्रकधारक को यह अधिकार नहीं होना चाहिए कि वह अपने वाहन को गैरेज से बाहर निकाले। हमें आने वाली जनरेशन को दिखा देना चाहिए कि हम कितने संयमी हैं। यह कि हमने कारें, ट्रक आदि होते हुए भी उन्हें नहीं चलाया। इस प्रकार हमने तेल की बचत की, पर्यावरण की रक्षा की, संसार को अकंटक चलाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। हम कितने महान हैं। मेरा भारत...

नहीं हुजूर, मेरा भाषण देने का क़तई कोई इरादा नहीं है। मैं तो बस असल मुद्दे पर आ ही रहा हूँ हुजूर। बस एक रिक्वेस्ट है हुजूर से। मुझे मुत्थूस्वामी से मोनोलॉग में डायलॉग करने की इजाज़त दे दी जाए। अब, जब आपकी इजाज़त मिल ही गई है हुजूर, तो मैं बस मुत्थूस्वामी से मुख़ातिब हुआ ही चाहता हूँ। इनके लगाए गए सब इल्ज़ामात की कापी मेरे पास है।

मुत्थूस्वामी, तुमको अमारी बात साफ़-साफ़ समज में आए इसके लिए अम तुमारी इन्दी में बोलता। पर एक बात का द्यान देकर सुनना। तुम अबी उज़ूर को बोला तुमारा ट्वन्टी ईयर्स, का लीगल एक्सपर्टीस। इसका मतलब तुमको कुच इल्लीगल एक्सपर्टीस बी ओना। नई, अम एक बात बोला। इदर आने वकत् अम अपनी बीवी को बोला, 'ये दरमपत्नी, तुम डिस्कसन के टाइम पर आना और देकना अम कैसे मुत्थूस्वामी के ट्वन्टी इयर्स एक्सपर्टीस को दोना।' नईं, अम कोई डेरोगेशन नईं करता। पर एक बात तुमको साफ़ बताता। अमारी बीवी को तुमारे नोटिस पर बोत गुस्सा। पर अमारी काबलियत पर उसको इत्मीनान। इसीलिए वो इदर आया। बाकी लोग बी आया। तुमारा डिप्रेशन को देकेगा ना सब। और अमारे इम्प्रेशन को। नईं मैं कुच बात बोला।

मुत्थूजी, तुम अमारे ऊपर अवाला का इल्जाम लगाया। ये चार्जशीट का स्ट्रांगेस्ट पाइन्ट ओना। इसीलिए अम इसको अबी डिस्कस करना और दिकाना ये चार्ज कितना बेसलैस और अनसाइन्टिफिक। इसके लिए अम एक एक्साम्पल लेना और दिकाना कि अवाला क्यों मस्ट ओना। मान लो के तुम एक वर्ड लेना-बलात्। बलात् में बला ओना और उसमें बल ओना। बल से किसी के ऊपर बला आना फिर बलात् कुच हो जाना। जैसे तुम अमारे ऊपर किया ये चार्जशीट भेजकर। नईं अम तुम पर कोई चार्ज नईं लगाता। अम शुरू में बोला अम एक एक्साम्पल के थ्रू अवाला के लिए एनालाजी देना। बस इतना अमारा मकसद। ये एनालाजी कैसे काम करना, अम तुमको दिकाना।

तुम अवालात का नाम सुनना? उसमें अवाला ओना। देश के सब बड़े-बड़े लोग फ्रीडम फाइटिंग में अवालात में गए। इतना हिस्ट्री बच्चे-बच्चे को मालूम। तुमको मालूम? ये कोई ट्वन्टी ईयर्स के लीगल एक्सपर्टीस से नईं मालूम ओना। इसके लिए स्कूल जाके हिस्ट्री बुक्स पढ़ना। तुम स्कूल में कभी पढ़ा के नईं ? या बस ऐसे ही एक्सपर्टीस से इदर आया? नईं अम डेरोगेट नईं करता। अम तो सच्चाई लाने में तुमारी मदद करता। तो अवालात में बड़े-बड़े लोग गए। पर अम उनकी बराबरी नईं कर सकता जी। अम चोट्टा लोग, इसीलिए अमको अवाला पे रुक जाना। तुम उजूर से पूँच के देकना। तुमको पता लगना के बलात् में बला से जादा सजा मिलना। इसी से अमको कोई अवालात नईं करना। अमको सिर्फ अवाला करना।

नईं तुम अमको बोलेगा तो अम और डीप में जाएगा। अम डीपर कोगनिटिव लेवल पर मैंटल स्टेट्स में जाएगा। इसमें ट्वन्टी ईयर्स का एक्सपर्टीस नईं काम करना। मैंटल स्टेट्स अपना-अपना ओना। इसमें तुमारा मैंटल स्टेट्स एंड अमारा मैंटल स्टेट्स में कोई रिलेशनशिप नईं ओना। अम तुमको बताएगा कैसे एक मैंटल स्टेट से दूसरे मैंटल स्टेट में जाना। ये अम तुमको अपने फोर्टी ईयर्स के एक्सपर्टीस से बोलना। उसमें रिसर्च चापने का भी एक्सपर्टीस इनक्ल्यूडिड, प्योरली ऐक्सपैरिमैंटल।

अम तुमको बोला अवालात ऊँची चीज। वो एक ऐसा प्रैक्टीकल जो किसी -किसी को सुइट करता। अम चोट्टा आदमी पर पास्ट में अमको प्रैक्टीकल ओने का शौकीन। इसीलिए अम अवा खाना। पर मैंटल स्टेट तो ट्राँसीशन ओना। इसीलिए अवा के मेन्टल स्टेट से अवाला के मैन्टल स्टेट में हमारा ट्राँसीशन ओना। ये नैचुरल, अमारा न्यूरल कनेक्शन्स। तुमको कैसे समजाएगा? पर अम सब समजता।

अबी अमारा दलील खतम नईं। तुम अमको बीच में टोका इसीलिए अमको अपने फौट्टी ईयर्स से ज्यादा के एकस्पर्टीस में जाना। प्योरली मैथेमेटीकल बट डिस्क्रीटली स्टैटिस्टीकल। नईं, उस सैन्टेन्स की चोड़ो। एक सैन्टेन्स में मीनिंग नईं ढूँढ़ना। अम तुमको चैलेंज देता तुम अमारी स्टैटिस्टिक्स को नईं गिरा सकता। नईं अम कोई थर्टी टू-टवन्टी फोर-थर्टी सिक्स की बात नईं करता। अम एवरेज़ की बात करता। अगेन अम एक एक्साम्पल के थ्रू तुमको समजाता के एवरेज़ कैसे निकालना। इसी का एप्लीकेशन अम तुमको आगे ले जाता ।

अबी बताओ, एक, दो और तीन का एवरेज़ कितना ओना? अम मीन का बात करता। तुमारा कितना मीन आना? नईं अम तुमको मीन

नईं बोला। अम पूँचा एक, दो और तीन का मीन कितना आना। इदर ट्वन्टी ईयर्स का एक्सपर्टीस नईं, मैथेमैटीकल थिंकिंग काम आना। अबी किसी से पूँचेगा तो एक, दो और तीन का मीन दो ओना। कैसे निकालना? वैरी सिम्पल। किसी तरीके से एक, दो और तीन को बराबर करना। उसके लिए एक को एक डण्डा मानना, दो को दो डन्डा मानना और तीन का तीन डण्डा मानना। अबी तीन का तीन डण्डे से एक डण्डा अटाकर एक के पास ले जाना। इससे सब जगह पर दो डण्डा ओ जाना। बस मीन दो ओ जाना। येईं एवरेज़ का कान्सेप्ट। इस प्रिंसिपल को इस फार्म में देकना। एक में एक जोड़ा दो, दो में एक जोड़ा तीन। एक और तीन के बीच में इसलिए दो मीन। मीन एक मध्यम चीज। इस प्रिंसिपल को अवा, अवाला और अवालात में लगाना। क्या मीन आना? अवाला मुत्थू, अवाला। इसी मद्यम मार्ग को अम फौलो करता। अम न राईटिस्ट ना लैफ्टिस्ट। मिडिल पाथ फार कन्टीन्युअस ग्रोथ एण्ड इवोल्यूसन। इसमें कोई शक?

नईं मुत्थू इसमें तुम मोड लेगा तो अमको सप्पोर्ट करेगा। अमारा अवालात जाने का फ्रीक्वैन्सी निल्ल। अम बोत अवा खाया। पर अम सबसे ज्यादा अवाला किया। मोड बी देकेगा तो अमको अवाला बिहेवियर बोत कन्जीनयल, मैथेमेटिकल्ली, स्टेटिस्टीकल्ली, फिलोसौफिक्ली, लिंगुउस्टीकल्ली। इस प्रकार अम प्रूव किया ये अमारा नैचुरल बिहेवियर। ह्यूमन राइट। क्यू ई डी।

अभी अम तुमारे थ्रू उजूर को रिक्वैस्ट करता, मुत्थूस्वामी। उजूर तुमको आदेश दें के तुम अबी पाँच साल तक इस कॉंटैक्स्ट में रिसर्च करना। अमको स्टडी करना। इसके लिए अबी चाहे तो उजूर से और्डर लेना के अमको अगले पाँच साल तक पब्लिक सर्विस करने का आदेश। तुमारे लिये अम पाँच साल तक पब्लिक सर्विस करने को तैयार। तुम अमारे अवाले को सिन्सेयरली, साइन्टिफिकल्ली, मैटिक्युलसली स्टडी करना। चाये तो एक्स्टरनल सुपरविजन लेना। पर कुच पेपर चापकर अमको बेजना। अम देकेगा तुमारे ट्वन्टी ईयर्स एक्सपर्टीस में क्या ऐड ओना। उसके बाद अम चार्जशीट के रिमेनिंग पाइन्ट्स डिस्कस करता।

उजूर अपने दरबार को एडजर्न करने का आदेश दिया, समजो तुमारा जान बच गया। अबी बच्चा समज के तुमको चोड़ता।

प्रोफेसर नरेन्द्र कुमार शर्मा

कोटि-कोटि प्रणाम्

ब्रह्माण्ड नियंता, प्रकृति नियंता,
सृष्टि रचयिता की जय हो।
तेरी अनुकम्पा, कृपा मात्र ही
मेरा चिर अवलम्बन हो।।

तूँ ही आदि, तूँ ही अनादि,
तूँ ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव हो।
जड़-चेतन के चिर-आश्रय
परब्रह्म, अजामय, परशिव हो।।

तूँ आदिशक्ति व पराशक्ति
तूँ ही दुर्गा, जगदम्बा हो।
तूँ ही लक्ष्मी - सरस्वती
तुम ही नारी व नर हो।।

ऐंकार, ह्रींकार तथा श्रींकार
अनामय नर-नारायण हो।
ओंकार ऊँ सब तुम ही हो
तुम ही क्लींकार, तत्वमसि हो।।

तूँ ही गंध, रस और शब्द
स्वर, नाद, नृत्य के उद्गम हो।
तेरे सृजन का तू पालक
जिसके संहारक भी तुम हो।।

तूँ सत्य चिरंतन, शिव, सुन्दर
व कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय हो।
तूँ ही कुण्डलिनी, चितिशक्ति
तुम ही बस एक जितेन्द्रिय हो।।

तूँ आदिगुरू, चिरगुरू, सद्-गुरू
तुम ज्ञानातीत, अगोचर हो।
हे अविनाशी, दीनबन्धु
माया से परे नीलमय हो।।

तूँ बस एक, द्वितीय नहीं
फिर भी अनेक बन बैठे हो।

तेरी माया ऐसी अद्‌भुत
सभी के अन्दर पैठे हो।।

तारे, नक्षत्र, ग्रह, अवनि, अग्नि
जल, पवन, शून्य के कारक हो।
चर-अचर तुम्हारे इच्छाफल
अनगिनत योनि के सर्जक हो।।

प्रारब्ध-कर्म की गुह्य-श्रृंखला
में सबको यूँ गूँथे हो।
गूढ़ सत्य से परे प्राणि को
माया में बींधे हो।।

वह खोजे तुमको यहाँ-वहाँ
भूला कि उसमें सोहम् हो
मूल तत्व से निराकार
स्थूल-सूक्ष्म में सब कुछ हो।।

परमाराध्य हे जगदाधार
मैं शरणागत हूँ, त्राहिमाम्।
तुमको मन-क्रम-वचन से मेरे
कोटि-कोटि अगणित प्रणाम्।।

वी पी गुप्ता
विधि प्रकोष्ठ

संस्कार : बच्चे और माँ-बाप

क्या आज कल के बच्चों को संस्कारित करना नामुमकिन है? क्या आजकल के बच्चों को संस्कार सिखाना या न सिखाना एक समान है? क्या आजकल के बच्चे संस्कार सीखना ही नहीं चाहते...???

क्या ऊपर उठ रहे सभी सवाल उचित हैं? अगर मेरी माने तो नहीं। क्योंकि संस्कार बोलकर सिखाने वाली चीज नहीं है। अपितु आस-पास के वातावरण से प्रभावित होकर संस्कार स्वयं सीख लिये जाते हैं।

अपने ही बचपन का एक छोटा सा उदाहरण देता हूँ। जब मैं लगभग आठ साल का था,मैं और मेरा दोस्त अपने-अपने मम्मी-पापा के साथ मेला देखने गये। मेले में हम दोनों ने एक ही खिलौना खरीदा जिसकी कीमत दो सौ रुपए थी। जब हम लोग घर वापस जाने लगे, तभी मेरे दोस्त के पापा ने मेरे दोस्त से कहा - अगर दादा जी पूछें खिलौना कितने का है तो बोल देना पचास रुपये का है।

अब जरा आप लोग धैर्य पूर्वक सोचिए, एक तरफ माँ-बाप अपने बच्चे को सिखाते हैं कि 'झूठ बोलना पाप है, झूठ नहीं बोलना चाहिए' और दूसरी तरफ वही माँ-बाप अपने ही बच्चे को झूठ बोलने का अभ्यास करा रहे हैं और अगर माँ-बाप ये सोचे कि आगे चलकर बच्चा उनसे झूठ नहीं बोलेगा तो क्या ये गलत नहीं.....??

आजकल अधिकतर माँ-बाप को ये शिकायत होती है कि बच्चा बड़ा हो गया है अब हमारी सुनता ही नहीं जवाब देने लग गया है। मेरे अनुसार इसमें आश्चर्य की क्या बात है? ये सब भी तो माँ-बाप ने सिखाया है।।

-अब आप कहेंगे ये कैसे हो सकता है??

उदाहरण देता हूँ - अगर बच्चे ने चाचा से कुछ गलत कह दिया। तो माँ-बाप बच्चे को डाँटने की जगह उसकी तारीफ करते हुए कहेंगे हमारा बच्चा तो बोलना सीख गया है चाचा-चाची की बोलती तो चुटकियों में बंद कर देता है। शाबाश! बेटे अगली बार चाचा-चाची कुछ कहें तो ऐसे ही जवाब देना। मजा आ गया।

अब जरा आप लोग ही बताइए किसने सिखाया बच्चों को बड़ों का बेअदब करना??

ये तो कुछ भी नहीं जिस कारण बच्चे बड़े होकर अपने ही माँ-बाप का सम्मान नहीं करते उसका मुख्य कारण तो ये है-

एक तरफ तो माँ-बाप अपने बच्चों को सिखाते हैं कि माँ-बाप का सम्मान करना चाहिए माँ-बाप तो ईश्वर का रूप होते हैं' और दूसरी तरफ माँ-बाप अपने ही बच्चों के सामने अपने माता-पिता की बात नहीं मानते, दुर्व्यवहार करते हैं। ये सब देखकर छोटे से बच्चे के मन में सवाल उठता है कि मेरे मम्मी-पापा अपने ही माता-पिता की बात नहीं मानते, उनका सम्मान नहीं करते और दूसरी तरफ मुझ से कहते हैं कि मैं उनकी हर बात माँनू, उनका सम्मान करूँ। अभी बच्चा कुछ नहीं कहेगा क्योंकि वो अभी छोटा है। लेकिन जब बच्चा बड़ा होगा और उसकी हिम्मत भी बढ़ेगी तब यही सवाल किस रूप में बाहर निकलेगा मुझे बताने की जरूरत नहीं है। पाठक खुद समझ सकता है।

अतः मेरा सभी माता-पिता से अनुरोध है कि आप अपने बच्चों को जो संस्कार देना चाहते हैं, उन संस्कारों को बोलकर सिखाने की

जगह, उन संस्कारों को स्वयं अपने चरित्र में उतारकर अपने बच्चों के सामने उदहारण पेश करें, बच्चे स्वयं संस्कारित हो जाएंगे। और आपका भविष्य आनन्दमय हो जाएगा।

अमन जैन
छात्र

दुकान

दुकानों की गलियाँ, दुकानें ही दुकानें, दुकानों की दुकान
मकानों पर दुकान और दुकानों से जुड़ती हमारी जिंदगी और हम इन्सान।।
चाचा हलवाई की दुकान, ठग्गू लडडू वाले की दुकान
राजू कुम्हार की दुकान
ओबामा पेंटर की दुकान, छोटे बढ़ई की दुकान, मिस्त्री की दुकान
शादी की दुकान और क्या खूब है
रोजाना आते जाते दुकानों के मेहमान.....
इन दुकानों से जुड़ती हमारी जिंदगी
और हम इन्सान.....।।
बीड़ी की दुकान, मदिरा की दुकान,
पीते लोगों की लगती रोज की दुकान
बैठे भिखारियों की दुकान, स्टैंड की दुकान,
पुलिस वालों की दुकान
और तो और भगवानों की दुकान
और इन दुकानों के महँगे सस्ते एक भगवान.....
इन दुकानों से जुड़ती हमारी जिंदगी
और हम इन्सान.....
अमीरों की दुकान, गरीबों की दुकान, शॉपिंग मालों की दुकान
सलाहों की दुकान, तू-तू मैं-मैं की दुकान, झगड़ों-दंगों की दुकान वसूली की दुकान, बनारसी चाय की दुकान, लस्सी की दुकान
डॉक्टर की दुकान और दुकानदारों के छोटे-बडे अरमान
इन दुकानों से जुड़ती हमारी जिंदगी
और हम इंसान.....।।
मुँहबोले भाई की दुकान, व्यवहार की दुकान,
गप्पों सप्पों की दुकान
निरक्षर की दुकान, सेठ की दुकान, मोल भाव की दुकान,
अपाहिज की दुकान, भेलपूरी की दुकान, जूतों की दुकान,
फिक्स रेट की दुकान,
पानी पीने की दुकान, पान मसाले की दुकान, पिज्जा की दुकान
चश्मे की दुकान, भाभी के लंहगे की दुकान,
डेनिस के आइस क्रीम की दुकान
और कई दुकानों पर ही बैठे हैं सीधे दीखते बेईमान.....
इन दुकानों से जुड़ती हमारी जिंदगी
और हम इन्सान.....।।
गोलगप्पों की दुकान, चाट की दुकान, डोसा साम्भर की दुकान
क्रिकेट की बड़ी दुकान और देखो
कैसे खेलों में बिकते अब इंसान.....
इन दुकानों से जुड़ती हमारी जिंदगी
और हम इन्सान.....।।

रामजी द्विवेदी
छात्र

अतीत के झरोखे से (संस्मरण)

आज जो भी मैं यहाँ लिखने जा रही हूँ, वो मेरे भावोद्गार हैं अर्थात् मेरे मन का दर्पण हैं जिन्हें मैं कलम की सहायता से शब्दों में परिणत करने का प्रयास कर रही हूँ। शनिवार का दिन था और 16 तारीख थी। मैं जल्दी अपनी प्रयोगशाला में आ गयी थी। उस दिन कोई भी प्रयोगशाला में नहीं आया था, शायद सभी सप्ताहांत का लुत्फ़ ले रहे थे, पूरे दिन मैंने कुछ-कुछ काम किया, परन्तु शाम के पांच बजते जैसे मन में कहीं उदासीनता आ रही थी।

मैंने अपने मोबाइल की तरफ नजर डाली, सोचा मम्मी से ही बात कर ली जाए, मम्मी जी से बात करके पता चला कि हमारे घर में सारे चाचा-चाची और मेरे सारे भाई-बहन आ चुके हैं और घर में काफी हर्षोल्लास का माहौल बना हुआ है। कहीं से हँसी की फुहारे छोड़ी जाती तो कहीं जाकर किसी को भिगोती, ऐसी हल्की-हल्की सी ध्वनियाँ मुझे मेरे मोबाइल से सुनाई पड़ रही थी। उन सब को सुनकर मेरे मन ने मुझे गुदगुदाना शुरू किया। मुझे लगा मुझे भी वहाँ पहुँच जाना चाहिए। ऐसा सोच कर मैंने मम्मी से अपने वहाँ आने के लिए कहा, सप्ताहांत होने की वजह से शायद उन्होंने स्वीकृति दे दी। बस क्या था अब तो जैसे मेरे शरीर में पंख लग गए हों। मैंने झट से साइकिल उठाई जरूरत के सामान अपने बैग में डाला और निकल पड़ी स्वयं को स्नेह, प्रेम, हँसी, मजाक, के रंगों में डुबोने के लिए। रास्ते में तो काफी मुश्किलें हुई, पहले तो ट्रैफिक जाम हो गया। अब तो ऐसा लग रहा था कि मैं समय से बस स्टॉप भी नहीं पहुँच पाऊँगी। कहते हैं जब आपको किसी भी चीज को पाने की ललक हो और वो आपसे परे हो तो व्याकुलता और भी बढ़ने लगती है। ठीक इसी प्रकार कुछ मेरी भी स्थिति थी। समय का एक-एक पल मुझे कई घंटों सा लग रहा था। किसी प्रकार बस स्टॉप पहुँची तो बस देर रात की थी पापा से पूछा तो उन्होंने मुझे रात की बस से चलने के लिए मना कर दिया और कहा कि लड़की को इतनी रात अकेले नहीं चलना चाहिए, कहीं बस पंचर-वंचर हो गयी तो रात में बीच रास्ते में कहाँ जाओगी। बेहतर होगा की सुबह-सुबह चली आना। जहाँ एक पल का इन्तजार नहीं कर सकती थी वहाँ पूरी रात का इन्तजार, जले में नमक छिड़कने का एहसास दे रहा था।

मेरा क्रोध तो सीमा पार जा चुका था। खुद के लड़की होने की बाबत लगता था लोग कितना झूठ बोलते हैं कि लड़कियाँ क्या नहीं कर सकती हैं। एवरेस्ट को छोंड़ो, चाँद पर जा चुकी हैं। और इधर मैं हूँ जो चाँद तो दूर की बात है अकेले रात बस से घर नहीं जा सकती। मन ही मन मैंने भगवान को खूब कोसा की अगली बार लड़की बनाया तो समझ लेना। ऐसा सोचते-सोचते आखिरकार अपने शहर वाले घर पर आ गयी। पर वहाँ भी कहाँ सुकून था। आँखें तो घड़ी की सुइयों पर टिकी हुई थी कि कब वे सुबह के चार बजाये। इन्तजार करते-करते किसी तरह सुबह के तीन बजे। मैंने फटाफट अपनेदैनिक कार्य किये, नहाया और पूजा में बैठी। अब तो भगवान से यही प्रार्थना थी कि कृपया अब कोई विलम्ब मत कीजिएगा।

घर पर ताला लगाया बिल्डिंग से नीचे आई तो तीन कुत्तों ने मेरे ऊपर भौंकना चालू किया। ऐसा तो कुछ भी नहीं था मेरे पास जिसे देखकर वो भौंकने लगे सिवाय एक स्कूल बैग के।

एक पल लगा कि कहीं इन कुत्तों ने मुझे कूड़ेवाली तो नहीं समझ लिया है। मैं थोड़ी देर रुकी कि अब शायद ये शांत हो जाए और तो और मैं जिधर भी चलने का प्रयास करती सब मेरे पीछे-पीछे भागने लगते। मन में एक डर आया कि कहीं काट न लें। पर फिर भी मैंने अपने आप को मजबूत किया और जोर से चिल्लाई, सारे कुत्तों ने मौन सा धारण कर लिया। फिर मैं वहाँ से धीरे से निकली। घर के पास तो कोई ऑटो नहीं था इसलिए धीरे-धीरे टहलते हुए मैं बस की तरफ चलने लगी। समय लगभग साढ़े चार का हो चुका था। थोड़ा रुकने के बाद मुझे एक ऑटो मिला, जिससे मैं बस स्टॉप पहुँची। घर जाने वाली बस सामने ही लगी हुई थी। ड्राइवर से पूछने पर पता चला कि दस मिनट में चलने वाली है। अब बस के अन्दर जाकर देखा तो मैं ही शायद बस की पहली सवारी थी। काफी देर बाद एक अंकल और आ गये मैंने सोचा चलो एक से भले दो हुए। बस चल पड़ी।

जब बस कानपुर से बाहर निकली और गाँवों की तरफ बढ़ रही थी, उस समय का एहसास तो अद्भुत था। सुबह की ठंड़ी-ठंड़ी सी हवा, कहीं से फूलों की आई भीनी-भीनी खुशबू, प्रातःकालीन सूरज की गुलाबी छटा, खेतों में हरी कालीन सी फैली हरियाली, आम के पेड़ से आती कोयल की कुहू की आवाज, गौरैया की चहचहाहट एक नव रोमांच सा उत्पन्न कर रही थी। ऐसा सुखद एहसास था कि मन कहता कि यार बस में ही बैठे रहो। लगभग ढ़ाई घंटों तक मैंने इसी रोमांच को महसूस किया। पर अचानक क्या हुआ मेरे आँखों से अश्रु प्रवाह होने लगा, अश्रु से भरी आँखें किसी को ढूँढने लगीं और मैं बार-बार खिड़की से झाँक रही थी। डर भी था कि ये अश्रु अपनी सीमा न पार कर जायें, अतः उनके प्रवाह को रोकने के लिए मैंने उन्हें पीने की कोशिश की। ऐसा क्यूँ हुआ...

बस मेरे ननिहाल मेरे नानी के घर के सामने से निकली थी, जो आज मेरे लिए रास्ते का एक बस स्टॉप जैसा हो गया था। जहाँ आज हमारा कोई नहीं है। हमारा नाम उस घर से जुड़ा रहे इसलिए मम्मी ने नानी का घर खरीद लिया था। वो घर जो दरवाजे खोले हमारे आने का इंतजार करता था। आज समय के परिवर्तन के साथ वीरान हो चुका है, जिसे आज हम ही जाकर खोलते हैं और हम ही बंद करते हैं। आँखें जिन्हें ढूँढ़ती थी बस से निकलते वक्त वो थे मेरे मामाजी जिन्हें हम दादा कहा करते थे वो अक्सर गाँव के चौराहे पर घूमने चले जाते थे। वो आज हमारे बीच नहीं हैं। उन्हें गुज़रे एक साल हो चुका है पर मन कहाँ इन बातों को मानता है, इसलिए सब कुछ जानकर अनजान बना हर जगह दादा को ढूंढ़ता है। इसी गमगीन हालत में सोचते-सोचते कब आँख लग गयी पता ही नहीं चला और जब झटके के साथ खुली तो बस स्टॉप आ चुका था।

अपनी ज़मीं पर पैर रखते ही अजीब सा सुकून था। धूप काफी तेज थी पर उसकी चिलचिलाहट भी सुकून दे रही थी। मैंने छोटी बाज़ार के लिए रिक्शा किया और वो घर की तरफ चलने लगा। रास्ते में देखा तो हीरो- होंडा में पैजामा कुरता और काले रंग के नागरे पहने, गले में गमछा, मुँह में पान का वीणा रचाएं और चेहरे पर बड़ी-बड़ी मूँछें वाले गठीले लोग हमारी बुंदेलखंड की सभ्यता को कुछ अलग तरह से ही प्रतिबिंबित कर रहे थे ।

रास्ते में छोटे-छोटे से मंदिर लेकिन शहरों के मंदिरों की तरह धूल नहीं खा रहे थे बल्कि उनमें भी आपको कोई न कोई अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करते मिल जाएगा। मंदिर में बजते घंटों की ध्वनि का नाद इतना पावन था कि रोम-रोम भक्ति-भावना से अभिसिंचित हो रहा था। वह नाद मन के सारे सैलाबों को निस्तेज कर मन को शांति प्रदान करता था। हमारे यहाँ तो अगर पेड़ के नीचे कोई मठिया पर बैठी देवियाँ हैं तो उन्हें भी हम पूरी श्रद्धा के साथ नमन करते हैं। कालिदास जी ने भी अपनी भावनाओं के पुष्प कुछ इस प्रकार अर्पित किये हैं...

मठिया पर बैठी पान खात मुश्कात ज्योति जगदम्बे की,
कालिदास कछु कहि न जात जगमगात ज्योति जगदम्बे की,,

ईश्वरीय भक्ति भावना से भरे यहाँ के सच्चे लोग जिनके लिए अपनी इज्जत मान मर्यादा ही सबसे कीमती वस्तु है। जिसे बचाने के लिए वे जीवन की हर सांस लगा देते हैं। उदाहरण के लिए आप महारानी लक्ष्मीबाई को ही ले लीजिए।

अब मेरी रिक्शेवाले से कुछ बातें शुरू हो गईं

उसने पूछा-आप कहाँ से आई हैं?

मैंने कहा-कानपुर से

उसने पूछा-आप क्या करती हैं?

मैंने कहा - पढ़ाई कर रही हूँ।

उसने कहा - बी. ए. या एम. ए.

मैंने कहा - उससे बड़ी वाली पढ़ाई

उसने कहा - तो नौकरी भी कर सकती हैं

मैंने कहा - पर मैंने अभी केवल पढ़ने के लिए ही सोचा है

उसने कहा-खूब पढ़ ले बिट्टी हरा, हमार माटी का नाव रोसहन कीन्हा...

मैंने कहा कोशिश करूँगी। धीरे-धीरे छोटी बाजार आ गया, मैंने पापा को फोन लगाया कि रिशू, (मेरे छोटे भाई को) भेज दीजिए। मुझे लेने के लिए रिशू आ रहा था मैंने दूर से देखा और मैंने रिक्शेवाले से कहा मेरा भाई आ गया, अब उतार दो मुझे, उसने कहा, कहाँ?

क्योंकि सामने से दो बड़े लड़के चले आ रहे थे। उनके पीछे रिशू था उसने रिशू को देखा और पूछा यही आपका भाई है? उसने मुझे फिर से देखा मैं समझ गई उसने क्या सोचा था कि मेरा भाई तो हट्टा-कट्टा नौजवान होगा पर रिशू तो महज 12 साल का एक छोटा सा लड़का था। अब मैंने रिशू के गले में हाथ डाला और घर पहुँचने से पहले हम एक बार फिर से बाजार की ओर चल पड़े। सामने गरमागरम जलेबियाँ बन रही थीं। जलेबी और दही खरीदा और फिर

हम घर पहुँचे। घर पर सबका व्रत था रिशू ने रास्ते में ही बता दिया था। घर का दरवाजा खोले बाबाजी इन्तजार कर रहे थे। मैं दौड़ कर बाबाजी के गले लगी, पापा के गले, रौशनी चाची, पप्पू अंकल, छोटी माँ और मम्मी ने मुझे गले लगाकर मेरे गालों पर एक प्यारा सा चुम्बन दिया, प्यारी बहन गुनगुन को मैंने प्यार किया। अब क्या प्लेट आई, जलेबियाँ निकली और कुछ मिनटों में हम तीनों ने चट कर दी।

अर्चना शुक्ला
शोध-छात्रा

बचपन की दोस्ती

आते रहियेगा! घर वाली ने कहा।
चाय वाले कप पर छपा था।
'दोस्ती बढ़ती है-रिश्ते मजबूत हो जाते हैं।'
हँसी आई पीने वाले को,
अरे! क्यों इस पवित्र रिश्ते को
झूठा कर देने देते हैं-ये चिन्हट के कुम्हार
क्या इतनी सस्ती हुई है दोस्ती
जरूर ओछी बुद्धि के होंगे-ये चिन्हट के कुम्हार
हर कप पर लिखते हैं - हर कप झूठा हो जाता है।
पर नहीं !!
यह तुम सोचते हो
वे तो पवित्र मन से ही लिखते हैं
वे तो मिट्टी पर लिखने के आदी हैं
वे फूलदानी पर लिखते हैं
चाय वाले कप पर भी,
फूल के गमलों पर भी,

तुम गमलों में काँटे बो दो! उनका क्या दोष!
तुम ऐश्ट्रे में राख डाल दो! उनका क्या दोष!
तुम कप को झूठा कर दो! उनका क्या दोष!
वे छोटे लोग होंगे! पर दिल के सच्चे हैं!!
उनका हाथ खुला हैं
पीने वाले के दिमाग में आया!!
बचपन से ही दोस्ती को कितना उच्च स्थान दिया
और आज एक कुम्हार मुझे याद दिला रहा है इसका
वो भी अपने दो कौड़ी के कप के सहारे
वो भी जब अपने दोस्तों से इतना दूर हूँ मैं।
जरूर किसी गलती की याद दिला रहा है यह कुम्हार मुझे!
जरूर कोई कपट है मेरे मन में, जो सताता है मुझे!
दिल में एक थरथराहट सी आ गयी
एक कंपन सी आई शरीर में!
छटपटाता हुआ चाय का कप हाथ से फिसल गया!
मारबल से टकराकर चूर हो गया!
एक घूँट भी ना पिया था-कप गिर गया!
मन चिन्तित हुआ! पर व्याकुल नहीं!!
बचपन के अपने दोस्तों से क्यों बिछड़ गया हूँ मैं,
इसी सोच में डूबता गया, कोई जवाब नहीं मिला!
अपने आपको को ही कोसता चला गया।
पर एक संतोष लिये मन में!
कप ने झूठा होने का मौका नहीं दिया
और कप पर लिखा था,
दोस्ती बढ़ती है-आते रहियेगा!
मुँह मोड़ लिया अपने ही घर की ओर
यद्यपि कप पर लिखा था-
आते रहियेगा-रिश्ते मजबूत हो जाते हैं!
अब तो शाम हो गई
होंठों पर मुस्कान सी आई
शायद नया दोस्त शाम
मेरे घर पर आया होगा
कहा था ना उसने दिन को
चाय पीने आऊँगा शाम को।
क्या उसे मैं कुल्हड़ में पिलाऊँ
या शीशे के गिलास में
जिस पर नहीं लिखा रहता है
जुबान से ही कहूँगा-आते रहियेगा।

प्रोफेसर मोहन कृष्ण मुजु

अच्छी तरह बोली गई वाणी अलग-अलग प्रकार से मानव का कल्याण करती है।

अनाम

सुखं दुखान्तमालस्यम्।
आलस एक ऐसा सुख है जिसका परिणाम दुख ही है।

अनाम

विद्या मित्रं प्रवासेषु।
प्रवास में विद्या मित्र की कमी पूरी करती है।

अनाम

देश की पुकार

अपने ही देश में
जब हम गुलाम थे
सभी एकजान थे
न हमारा संविधान था
न हमारी नीतियाँ थी
गुलामी में जकड़ी हुई
अनेक कुरीतियाँ थी
अपना हक पाने के लिए
बापू करते थे सत्याग्रह
साथ हो जाते थे हजारों हाथ
बिना किसी आग्रह
सत्य के पथ पर वे
मर मिट जाते थे
आजादी पाने को कितनी
लाठियाँ खाते थे
अब हमारा संविधान है
नीतियाँ भी हमारी हैं
पर मनमानी करने को
दुश्चरित्रता हम पर भारी है
सत्य मर रहा है
नीतियों पर अनीतियाँ हावी हैं
अति आधुनिकता के पथ पर
पीढियाँ हमारी भावी हैं
अपने देश के नौजवानों
अब जाग जाओ प्यारे
इन्साफ के लिए आगे बढ़ो
जैसे बापू और अन्ना हजारे
सत्य के आग्रह पर
जब करोड़ों शीश जुड़ जायेंगे
संविधान में बैठे अनैतिक
पाँव हिल जायेंगे
उठो, बढ़ो और सत्याग्रह से जुड़ो
देश की आवाज़ पर इस ओर मुड़ो
भ्रष्टाचार से लड़ाई हमारी जिम्मेदारी है
वक्त की पुकार पर चुप रहना गद्दारी है

पूजा मिश्रा
आईआईटी कैंपस

खुशी

'ज्ञान रतन का जतन कर माटी को संसार,
हाय कबीरा फिर, फीका है संसार'।

एक छोटे से घुटने के बल चलने वाले बच्चे ने एक दिन सूर्य के प्रकाश में खेलते हुए अपनी परछाईं देखी। उसे वह एक अद्‌भुत वस्तु लगी क्योंकि वह हिलता तो उसकी वह छाया भी हिलने लगती थी। वह उस छाया का सिर पकड़ने की कोशिश करने लगा। जैसे ही वह छाया के सिर को पकड़ने के लिए जाता वह दूर चली जाती। उसके और छाया के बीच फासला कम नहीं होता था। थक कर और असफलता से वह रोने लगा। इतने में जब उस बच्चे की माँ की नजर उस पर पड़ी तो उसने आकर उस बच्चे का हाथ उसके सिर पर रख दिया। बस फिर क्या था। वह बच्चा हँसने लगा क्योंकि उसने अपने सिर के साथ ही छाया के सिर को पकड़ लिया था।

हम भी उसी बच्चे की तरह हैं, जो छाया में खुशी तलाशने में लगे हैं। जिन्दगी एक छाया है और हम उसी छाया को सच मानकर उसके पीछे दौड़ रहे हैं। वास्तव में सच तो यही है कि हमारी इच्छाओं का कोई अन्त नहीं है। इन्हें जितना पूरा करो ये उतनी बढ़ती जाती है। आज हम जिन चीजों को अपनी जिन्दगी मानकर एक दूसरे की टाँग खींचने में लगें हैं, ये सब सिर्फ हमें पल दो पल की खुशी दे सकती हैं। जैसे किसी घर में हमेशा कलह बनी रहती है, घर के सभी सदस्यों में आपसी खींचतान बनी रहती है, उस घर में अगर कोई कार आ जाये तो उस जहरीले माहौल को कुछ समय के लिए जरूर खुशनुमा बनाया जा सकता है। हमेशा के लिए नहीं। वो कार थोड़े समय के लिए परिस्थिति को संभाल जरूर सकती है पर सुधार नहीं सकती है। यह याद रखना चाहिए कि इस संसार में स्वयं के अलावा कुछ नहीं पाया जा सकता। जो अपने आप को खोजते हैं, वे पा लेते हैं। वासनाओं के पीछे भागने वाले लोग हमेशा असफल रहते हैं। वे जीवन को कभी खुशी से जी ही नहीं पाते हैं क्योंकि वो असली खुशी से अनजान होते हैं। असली खुशी अपने ही अन्दर है। क्योंकि अपनी जिन्दगी को खुशी या गम से भरा आप खुद अपनी

सोच से बनाते हैं, क्योंकि कोई परिस्थिति अच्छी या बुरी नहीं होती अपितु आपकी स्वयं को न जानने या जानने की शक्ति ही आपको दुखी और सुखी बनाती है। जिसने इस सच को समझ लिया कि असली खुशी स्वयं के अन्दर है वही इस जीवन को सही ढंग से जी पाता है।

क्योंकिः

ज्यों तिल माहि तेल है, ज्यों चकमक में आग
तेरा साईं तुझ में है, जाग सके तो जाग।।

अंजनी कुमार
कनि.तक.अधीक्षक

गधे का दिमाग

गधे का दिमाग
क्या वह गधे का दिमाग था,
जो गरीबों के काम आता था,
जो दुख दमन में भी सुख की अनुभूति करता था,
जो धनी-निर्धन के भाव से हटकर
सबको समता का पाठ पढ़ाता था,
क्या वह गधे का दिमाग था?

जो काले रंग को काजल बनाता था,
जो निर्मम दानव को भी ममता सिखाता था,
जो लंगड़े को चलने की हिम्मत से लेकर
अंधों को तीर-कमान सिखाता था,
क्या वह गधे का दिमाग था?

जो कठिन परिस्थितियों में भी कभी न विचलित होता था,
जो बाधाओं से लड़-लड़कर अपने लक्ष्य को छूता था,
जो कायरों को भी प्रेरित कर
नए-नए मार्ग खोज लेता था,
क्या वह गधे का दिमाग था?

चाहे देना पड़े लहू, जिसने न झुकना सीखा था,
देशभक्ति के भाव को लेकर जिसने सबक
गाँवों-कस्बों के टुकड़ों को मिलाकर
जिसने एक राष्ट्र संजोया था,
क्या वह गधे का दिमाग था?

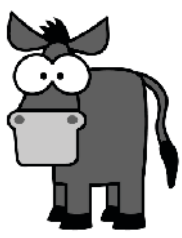

हाँ वह एक गधे का दिमाग था,
जो सबकी मदद को तत्पर था,
जो सब लोगों से हटकर था,
जो सागर का किनारा था,
जो जुलाहों, चरखों और सूत सहारा था,
हाँ वह एक गधे का दिमाग था।

तो आज आवश्यकता है उसी गधे की

जो फिर सबको समझा सके,
जो धनी-निर्धन के फर्क को मिटा सके,
जो लोगों को पढ़ा सके प्रेम का सच्चा विज्ञान
ताकि फिर से हो सके जग-कल्याण।

अनुराग कैथल (छात्र)

भीड़

भीड़ जड़ है,
एक मूक श्रोता है
जो सुनता है अनजानी चीखें
जो सहता है दमन का कुठाराघात,
जिसके भाग्य में है अवसाद की धूल,
जिसमें है अदृश्य शूल!
जहाँ होता है शोषण स्वीकार,
जहाँ उड़ती है मर्यादा की धज्जियाँ,
जहाँ है रुदन और सिसकियाँ।
भीड़ शक्तिपरीक्षण का है एक स्थल,
किसी का सर उपर, तो किसी के पैरों तले, किसी का वक्षस्थल।
भीड़ में शांति की तलाश,
जैसे जेठ में हरी घास।
भीड़ में गंदगी तो लगनी ही है,
शरीर मिट्टी से सनी ही है,
सपने सुलगने ही हैं, आशाएं टूटनी ही हैं।
भीड़ में घुटन होती है,
पर जीवन ज्योत यूँ सघन होती है,
ढ़ीठ बुझती ही नहीं,
साँस रुकती ही नहीं।
भीड़ में कष्ट का स्वरूप है,
जीवन के दुखों का प्रारुप है,
जिसने भीड़ में चलना सीख लिया,
समझों जीना सीख लिया।

अमित कुमार झा (छात्र)

लघु कथा

सुधाकर और रमेश बैठे बातें कर रहे थे। सुधाकर सिंह हाईकोर्ट के जाने माने वकील हैं और रमेश अग्रवाल शहर के पास स्थित चीनी मिल के मालिक, साथ ही उनके कुछ और भी कारोबार हैं।

सुधाकर अपनी पत्नी उमा को आवाज लगाते हैं -'उमा, जरा दो कप चाय तो लेकर आना, रमेश आया है।'

दो दिन पूर्व ही रमेश की शुगर फैक्ट्री में एक हादसा हो गया था। गन्ने का रस उबालने वाला बॉयलर एकदम से फट गया। आसपास काम कर रहे 15 लोगों की मौके पर ही मृत्यु हो गयी। उमा एक प्लेट लेकर आती है।

रमेश आश्चर्य से -'अरे आपने इतनी जल्दी चाय कैसे बना दी?'

'अरे मैं चाय नहीं, कोल्डड्रिंक लायी हूँ। पता है दो दिन से दूधवाले भैया नहीं आये हैं और ये हैं कि बाहर से दूध लेने जाते भी नहीं।'

इस दूध वाले ने तो परेशान कर रखा है। पता नहीं किस रिश्ते से उमा का भाई बन गया है। उसे कुछ बोलो तो ये मुँह फुला लेती हैं। उमा के गाँव का न होता तो कब का निकाल फेंक चुका होता। सुधाकर थोड़ा गुस्से में बोला।

'खैर छोड़िये इन बातों को, आप बताइये रमेश भईया कैसे आना हुआ?'

'एक मुकदमें के सिलसिले में बात करने आया था।'

'मुकदमा???'

'अरे भाभी आपको तो पता ही होगा, वो मेरी फैक्ट्री में हादसा हो गया था। पूरा अस्पताल का खर्च और 15,000 रु. मुआवजा सभी परिवारों को दिया। अब वो 50,000 रु मुआवजा माँग रहे हैं और इसी बात को लेकर कोर्ट में केस कर दिया है।' रमेश ने कहा।

'मैं तो कहता हूँ रमेश 20,000 रुपये सभी को और दे दो और मामला रफा दफा करो, फालतू में कोर्ट कचहरी के चक्कर में न पड़ो तो अच्छा है। अगर कहीं मीडिया पीछे पड़ गया तो जान छुडाना मुश्किल हो जायेगा।'

'अरे कैसी बात करते हो आप' उमा बीच में ही बोल पड़ी।' बॉयलर फटा तो क्या इसमें रमेश की गलती थी? पहले तो वो सब कामचोरी करेंगे, फिर हादसा हो जाये तो मुआवजा माँगेंगे। अरे मैं होती तो 15,000 रु. भी न देती। इन लोगों पर जितना प्यार दिखाओ उतना ही सर पे चढ़ जाते हैं।

तभी दरवाजे की घंटी बजी। नौकर ने दरवाजा खोला तो दूधवाला दूध लेकर अंदर आया। उमा ने कहा भइया दो दिनों से कहाँ थे 'दीदी, उस दिन फैक्ट्री में बॉयलर फट गया। हमारा बेटा उसी में जल के मर गया। बेटे की मौत का शोक मनाने का अधिकार तो दे ही दो हम लोगों को।"

शशांक शेखर
छात्र

राष्ट्रीय एकता की कड़ी : हिन्दी भाषा

स्वचेतना एवं भाषा बोध से व्यक्ति की अस्मिता-अहम् अस्मि----मैं हूँ का परिज्ञान होता है। जीवन के अनन्त रूप ही मनुष्य के मन-मस्तिष्क में बिम्ब बनकर उभरते हैं जिनकी सबल अभिव्यक्ति उसकी अपनी भाषा के द्वारा ही संभव हो पाती है। वस्तुतः व्यक्ति अपनी मातृभाषा और राष्ट्रभाषा के अभाव में वाणी-विहीन होकर रह जाता है, उसे आत्मनिर्वासन की अनुभूति होने लगती है। भारतेन्दु के शब्दों में--

'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल।।'

यह एक व्यापक सत्य है कि कोई भी आन्दोलन तभी सफल हुआ है जब उसमें जनसाधारण एवं जनभाषा की भागीदारी हुई है। भारत देश के संदर्भ में यह भी एक कड़वा सच है कि हिन्दी भाषा सदा से ही दोयम श्रेणी के लोगों की भाषा स्वीकार की गई, फिर भी आजादी की लड़ाई में इसकी केन्द्रीय भूमिका रही। जब तक स्वतंत्रता की लड़ाई चलती रही तब तक हिन्दी भाषा को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने के संबंध में भ्रम की स्थिति बिल्कुल नहीं थी। सभी एकमत थे। खुले मन से संविधान में यह लिखा गया-'संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी का प्रचार बढ़ाये, उसका विकास करे, ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके।'

परन्तु इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि शिक्षा के व्यापक प्रचार-प्रसार के कारण जहाँ राज-भाषा हिन्दी के प्रति प्रेम को बढ़ना चाहिए था, उसमें गिरावट आयी है । संभवतः सम्पूर्ण संसार का एक बाजार में परिवर्तित हो जाना ही एक प्रमुख कारण हो जिसने हमारी भाषा और सामासिक संस्कृति दोनों को प्रभावित किया हो। डॉ विद्यानिवास मिश्र के शब्दों में 'आज हमने अपने बीच भाषा की ऐसी झूठी प्राचीर खड़ी कर ली है कि लोगों में असंवाद की स्थिति उत्पन्न हो गयी है।' उन्हीं के शब्दों में 'एक अपनी ऊँची जबान से नीचे उतरने में डरता है और दूसरा अपनी जबान से अलग होने में जीवन की सार्थकता नहीं पाता।

प्रश्न यह है कि इस प्राचीर को कैसे धराशायी किया जाय? राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता के इस स्वाभिमानी अटूट रिश्ते की

नये सिरे से पुनर्व्याख्या कैसे की जाय कि एक बार पुनः भारतीय चिन्तन मौलिक रूप से जनमानस के चिन्तन-मनन एवं आचरण को अपनी भाषा में अभिव्यक्ति कर सके।

हमें यह देखना होगा कि हिन्दी भाषा उस भारतीय संस्कृति की वाणी है जिसे देववाणी कहा गया है और जिसकी लिपि को देवनागरी लिपि कहा जाता है। जिसनें कई विदेशी ताकतों को नकारते हुये उपनिषदों और रामायण के युग से आज तक इस उपमहाद्वीप को मानव-मूल्यों से अभिसिंचित कर उसकी आन्तरिक सत्ता को व्यापक अभिव्यक्ति प्रदान की है।

राष्ट्रीय एकता के प्रति हिन्दी भाषा सदा ही समर्पित रही है यह निर्विवाद है; परन्तु आजादी के साठ वर्षों से अधिक व्यतीत होने के पश्चात् भी हिन्दीभाषा के योगदान पर जब कुछ तत्वों द्वारा सवालिया निशान लगाया जाता है तब मन क्षुब्ध होता है कि आज के लोग कैसे यह भूल जाते हैं कि इस देश में राष्ट्रीय एकता के बीज को पोषित करने में हिन्दी भाषा ने उल्लेखनीय भूमिका निभायी है। विभिन्न भाषा-भाषियों के वैचारिक आदान-प्रदान की कड़ी बनकर हिन्दी भाषा ही उठकर आई थी और तब भारत के लोग शक्तिशाली अंग्रेजों के कुशासन से मुक्त हो सके। और तो और बड़े-बड़े नेता, डॉक्टर, वकील, विदेशी भाषा में शिक्षा ग्रहण करने के बावजूद हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रति पूर्णतया समर्पित थे। स्वयं गाँधी जी अपनी बैरिस्ट्री की पढ़ाई विलायत में करने के बावजूद उन्होंने इस बात को बड़ी गहराई से महसूस किया था कि भारतीय स्वाधीनता का कोई मतलब नहीं रह जाएगा जब तक कि हम अपनी राष्ट्रभाषा के स्वरूप को सुनिश्चित नहीं कर लेते। कहना न होगा कि स्वयं उन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में पूरे भारत में स्थापित करने के लिए पूरी निष्ठा और तन्मयता से आन्दोलन चलाया था।

वस्तुतः हमारे राष्ट्रीय एकता की संकल्पना अतीत के गौरव और सुनहले भविष्य के स्वप्न पर हुई है जिसके रीढ़ की हड्डी है हिन्दी। आज भी हिन्दी राजभाषा के साथ-साथ इस महादेश की जनभाषा भी है, कोई भी देशव्यापी आन्दोलन आज भी, केवल हिन्दी भाषा में ही अपनी सम्पूर्णता को प्राप्त कर सकता है। बस हमें हिन्दी को हिन्दी-भाषी क्षेत्र से आगे अहिन्दी भाषी क्षेत्र तक बढ़ाकर इसे और राष्ट्रव्यापी बनाना होगा। आचार्य काका कालेलकर ने कहा था 'हिन्दी उत्तर और दक्षिण को जोड़ने वाली कड़ी है यदि यह कड़ी बनी रही तो देश को मजबूत बनाया जा सकता है 'ध्यात्व है कि यह कथन उस समय का है जब विश्व में सूचना क्रान्ति नहीं आयी थी। शनैः-शनैः वैज्ञानिक प्रगति होती गयी और संचार के क्षेत्र में अभूतपूर्व क्रान्ति का सूत्रपात हुआ फलस्वरूप पूरा विश्व मुट्ठी में समा गया। अतः यदि हमें विश्व पटल पर एक राष्ट्र होने का अपना दावा प्रमाणित करना है तो हमारा यह प्रयास होना चाहिए कि हमारी अधिकांश बातों एवं व्यवहार में एक रूपता होनी चाहिए। परन्तु देखा यह गया है कि आजादी के साथ ही एक वृहद् भारत की संकल्पना साकार हो तो गई लेकिन राष्ट्रभाषा की संकल्पना प्रान्तीय भाषाओं एवं भिन्न-भिन्न लिपियों में उलझकर रह गयी। वास्तविकता तो यह है कि राजभाषा हिन्दी के साथ-साथ हम किसी भी प्रान्तीय भाषा को पूरी तरह रोजगार से आज भी नहीं जोड़ पाये नतीजतन समस्त भारतीय भाषायें आज भी अंग्रेजी भाषा की तुलना में दोयम दर्जे की ही अधिकारी हो पाती हैं। कहना न होगा कि हमने अपनी मात्रभाषा की अपेक्षा अंग्रेजी भाषा को प्रेम दिया जिसका परिणाम यह हुआ कि आजाद भारत में शिक्षा और राजनीतिक स्तर पर जागरूक ऊँचे तबके के लोगों के साथ जन साधारण का रिश्ता कमजोर होते-होते लगभग टूट सा गया है। यह भी वास्तविकता ही है कि राजनीतिक प्रशासनिक एवं शैक्षणिक स्तर पर जागरूक तबके द्वारा भारतीय भाषा में दुर्बोध एवं गहरे वैज्ञानिक विचारों को संप्रेषित करने हेतु यथोचित शब्द-विधान की रचना के प्रति कोई ठोस प्रयास नहीं किया गया फलस्वरूप आज चाहे उच्चशिक्षा की बात हो या कि किसी भी प्रकार के वैज्ञानिक शोध का विषय हो हमें अंग्रेजी भाषा के सामर्थ्य पर ही निर्भर रहना पड़ता है। राष्ट्रभाषा और लिपि के संबंध में अपना मत व्यक्त करते हुए राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने कहा था कि हमें एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता है और "जितने साल हम अंग्रेजी सीखने में बरबाद करते हैं, उतने महीने भी अगर हम हिन्दुस्तानी (अपनी भाषा) सीखने की तकलीफ नहीं उठाते, तो सचमुच कहना होगा कि जनसाधारण के प्रति अपने प्रेम की जो डींगें हम हाँका करते हैं वे निरी डींगे ही हैं। "इंदौर में सन् 1935 में हुए हिन्दी साहित्य सम्मेलन के 24वें अधिवेशन में अध्यक्ष पद से दिये गए अपने संबोधन में आधुनिक जगत से परिचय, अर्थ-जगत में सफलता एवं उच्चशिक्षा; विशेष रूप से वैज्ञानिक शोध जैसे कार्यों के लिए अंग्रेजी भाषा की आवश्यकता को तो उन्होंने महसूस किया था लेकिन इस बात की पुरजोर वकालत की थी कि " चाहे कितना भी प्रयत्न क्यों न करना पड़े यदि हिन्दुस्तान को सचमुच एक सशक्त राष्ट्र बनाना है तो चाहे कोई माने या न माने हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा का दर्जा देना ही पड़ेगा; क्योंकि सम्पर्क भाषा के रूप में जितनी व्यापकता हिन्दी को प्राप्त है उतनी किसी प्रान्तीय भाषा को नहीं मिली।"

वस्तुतः यह अपरिहार्य हो जाता है कि यदि हम पूरे भारत को एक

सूत्र में पिरोने का दावा करते हैं तो हमें यथाशक्ति हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार एवं प्रयोग में अपनी सहभागिता निभानी चाहिए। जनसाधारण को समझना होगा कि हिन्दी भाषा का फलक अत्यन्त व्यापक है। यह केवल आचार्यों की भाषा नहीं है बल्कि इसमें समस्त मानवीय संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने की अद्‌भुत क्षमता है। इसकी देवनागरी लिपि ही इसे संसार की सर्वाधिक वैज्ञानिक वर्तनी-विधान से सम्पन्न भाषा बनाती है। कुछ समय पहले तक फॉन्टों एवं सॉफ्टवेयरों की अधिकता के कारण कम्प्यूटर पर देवनागरी फाइलों को खोलने में आ रही समस्याओं से यूनीकोड फॉन्ट के आगमन ने दूर कर दिया है और अब कम्प्यूटर पर कार्य करना उतना ही आसान हो गया है जितना कि अंग्रेजी भाषा में है।

वस्तुतः कुछ समय पहले तक संगणक उपयोग कर्ता के लिए हिन्दी में काम करने में एक असमंजस की जो स्थिति थी उसका मुख्य कारण अनेक प्रकार की बोर्ड लेआउट एवं विभिन्न फॉन्ट थे। अब जबकि यूनीकोड फॉन्ट का विकास हो चुका है और उसके प्रयोग में उत्तरोत्तर वृद्धि भी हो रही है तो फिर राजभाषा हिन्दी को सरलता एवं सुविधा के नाम पर अवैज्ञानिकता की ओर धकेलने की बजाय पुर्नभाषित करने की आवश्यकता है। व्यवस्था के हर पायदान पर प्रभावी भूमिका के निर्वहन में सक्षम हर नागरिक को पूरे भारतीय जनमानस को समझाना होगा कि रोमन लिपि देवनागरी लिपि की स्थानापन्न नहीं बन सकती। देवनागरी की वर्ण-व्यवस्था पूर्ण रूप से वैज्ञानिक है, इसकी ध्वन्यात्मक अभिव्यक्ति कर्णप्रिय है और हमारे अंतस् को ममतामयी स्पर्श का अहसास कराती है।

निष्कर्षतः राजभाषा हिन्दी त्वरित गति से वैश्विक पहचान प्राप्त कर रही है, इसकी विविध विधाओं में निरन्तर साहित्य-भंडार बढ़ रहा है समाचार पत्रों एवं टेलीविजन के माध्यम से हिन्दी-भाषा की संप्रेषणशक्ति में व्यापकता एवं गंभीरता का विकास हो रहा है सरकारी कार्यालयों में राजभाषा विभाग द्वारा निर्गत आदेशों/अनुदेशों के अनुपालन में निरन्तर बढ़ेत्तरी इस बात का प्रचुर संकेत देती है कि राजभाषा हिन्दी पूरे राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने की क्षमता रखती है।

डॉ वेदप्रकाश सिंह
सहायक कुलसचिव

हमारा प्रयास

हिन्दी दर्शन, भारत दर्शन,
हिन्दी तन है हिन्दी मन है।
हिन्दी धुरी है राष्ट्र-चक्र की
हिन्दी हृदय की धड़कन है।।

इन्हीं पंक्तियों को मूलमंत्र मानते हुए हिन्दी साहित्य सभा मातृभाषा हिन्दी के विकास, प्रचार-प्रसार तथा कैम्पस की आम जनता में हिन्दी के प्रति आदर-सम्मान जगाने हेतु प्रयासरत है।

इन्ही प्रयासों में सर्वप्रथम हम अहिन्दीभाषी जनता के लिए निःशुल्क हिन्दी कक्षाओं का आयोजन करते हैं। इन कक्षाओं में प्रोफेसर, स्नातक, परास्नातक एवं हर प्रकार के लोग आते हैं और धीरे-धीरे हिन्दी भाषा से जुड़ते हैं।

सभा कैम्पस में विविध प्रांतों से आए लोगों के लिए मंथन, सप्तरंग, आशु-भाषण, प्रेमपत्र-लेखन, वाद-विवाद, कराती है। हिन्दी दिवस के अवसर पर विभिन्न कार्यक्रमों का भव्य आयोजन भी देखने को मिलता है।

पिछले वर्ष आई आई टी का अपना कैम्पस रेडियो आया। कैम्पस के लोगों की आवाज़ जनता तक पहुँचाने के लिए हमनें रेडियो पर दो कार्यक्रम में हमने सुप्रसिद्द रचनाकारों जैसे मुंशी प्रेमचंद्र, फणीश्वरनाथ रेणु इत्यादि की रचनाएं तथा 'मन की आवाज़' कार्यक्रम में लोगों को अपने कल्पना-सागर से निकले भावों को अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान किया। आज न केवल संस्थान अपितु इसके आस-पास के क्षेत्रों में रहने वाले हर वर्ग के लोग इन कार्यक्रमों का भरपूर आनंद उठा रहे हैं।

इस वर्ष सभा ने हिन्दी माध्यम से अध्ययन करने आए छात्र-छात्राओं को यहाँ के परिवेश में ढलने तथा अध्ययन में आ रही कठिनाइयों को दूर करने के लिए परामर्शदात्री सेवा (काउन्सिलिंग सर्विस) के साथ मिलकर विशेष कक्षाओं का आयोजन भी किया।

अन्ततः हमने राजभाषा प्रकोष्ठ, आई आई टी कानपुर के साथ मिलकर संस्थान की सर्वप्रथम हिन्दी पत्रिका (अंतस्) में योगदान देना अपना कर्तव्य समझा। यदि हमारे द्वारा किये जा रहे प्रयास आपके दिलों को छू लेने में सफल रहे हैं, तो इसी में हमारी सार्थकता निहित है।

समन्वयक
हिन्दी साहित्य-सभा (छात्र- परिषद)

विशेष - कृपया पत्रिका के विषय में अपनी प्रतिक्रिया एवं सुझाव अवश्य प्रेषित करें।